प्रकरण अठारह

कार्यारम्भ

स्वामी भक्तिवेदान्त संयुक्त राज्य अमेरिका आये और शीघ्र ही न्यूयार्क लोअर ईस्ट साइड के आर्चीटाइप स्पिरिचुअल नेबरहुड में चले गये और वहाँ अविकल रूप में प्राचीन, पूर्णरूप में सुरक्षित मार्ग-खंड, भारत की स्थापना की। उन्होंने एक स्टोर के अग्रभाग को अपने आश्रम के रूप में अलंकृत किया और उसके भीतर कृष्ण की आराधना की तथा धैर्य और विनोद-प्रियता के साथ दिन-प्रतिदिन गायन, कीर्तन एवं संस्कृत शब्दावली का भाष्य करते हुए उन्होंने अमेरिका ईस्ट के... मानस को अभिव्यक्त करने वाले केन्द्र में कृष्णभावनामृत की नींव डाली।... लोअर ईस्ट साइड को अपने अवधान के लिए चुनना, कितनी दयालुता, विनम्रता और बुद्धिमत्ता का कार्य था वह!

—एलेन गिन्सबर्ग

मैकमिलन भगवद्गीता यथारूप की प्रस्तावना से

प्रभुपाद का नया पड़ोस निकटवर्ती बोवरी जैसा गया-गुजरा न था, यद्यपि यह निश्चित रूप से अनूठा भी न था। उनके स्टोरफ्रंट के ठीक सामने उस पार वाइजर ब्रदर्स तथा पैपर मेमोरियल्स की धुंधली रोशनी से आलोकित प्रदर्शन-खिड़कियों से मजार के पत्थरों की एक कतार दिखती थी। वाइजर ब्रदर्स से उत्तर की ओर सैम का भोजनालय था। उसके बाद चार-मंजिली ए.आई.आर. नामक प्राचीन इमारत थी, तब बेन जे. होरोविट्ज के ऐतिहासिक स्तंभ (अधिकतर कब्र के पत्थर) और अन्त में श्वार्ज का श्मशान-घर था। अगले ब्लाक में ४३ नम्बर पर घिसी हुई केन्वस का सायबान फुटपाथ पर तना हुआ था, जहाँ प्रोवेंज़ानो लैन्जा श्मशान-घर था। उसके बाद कास्मोस पार्सेल्स (आयातकर्ता) था

और कुछ ब्लाक और आगे जाने पर विलेज ईस्ट थिएटर का स्पष्ट दिखने वाला काले-सफेद अक्षरों में लिखा साइनबोर्ड लगा था।

स्टोरफ्रंट वाली गली में उसी ओर एक ब्लाक आगे नेटिविटी का गिरजाघर था, जो एक तिमंजली पुरानी इमारत थी, जिस पर नया नीला रंग पुता था और जिसके शिखर पर सुनहरे रंग का 'क्रास' लगा था। छह-मंजिला छब्बीस एवन्यू, जिसका सामने का भाग हरे रंग की अग्नि-बचाव सीढ़ी से ढका था, विशाल नौ-मंजिले निकेरबोकर फायरप्रूफ गोदाम के सामने दबा खड़ा था।

सेकंड एवन्यू पूर्वी मैनहट्टन के लिए यातायात का मुख्य मार्ग था और हूस्टन तथा सेकंड एवन्यू के चौराहे पर लगी स्टॉप-लाइट से ट्रकों, टैक्सियों तथा निजी वाहनों का ताँता प्रभुपाद के दरवाजे से हर समय गुजरता रहता। बड़े सवेरे से रात तक कारें सर्राटे से निकलती रहतीं। फिर ब्रेक लगाने की और सिरे से सिरा मिलाकर गाडी खड़ी करने की प्रतीक्षा की होड़ चलती रहती, भोंपू प्रचण्ड रूप से बजते रहते, गियर चरमराते रहते, इंजन गड़गड़ाते-घरघराते रहते और फिर उनके सर्राटे से निकल जाने की आवाजें आती रहतीं। यातायात अत्यन्त सघन और चित्त-विक्षेपकारी था।

२६ सेकंड एवन्यू में, वास्तव में दो स्टोरफ्रंट थे। उत्तर वाला सिक्का डालकर चलने वाला धुलाई घर था और दक्षिण वाला कभी उपहारों की दुकान रहा था, किन्तु अब खाली था। दोनों के प्रवेशद्वार संकरे थे; उनकी प्रदर्शन खिड़कियाँ बड़ी-बड़ी थीं, किन्तु उनका रंग गंदला था। मैचलेस गिफ्ट्स साइनबोर्ड के नीचे एक छह फुट वर्गाकार की खिड़की थी जिसमें कुछ सप्ताह पूर्व दियासलाई की डिब्बियाँ प्रदर्शित की गई थीं, जिन पर तीसवें और चालीसवें दशकों के सिनेमा-स्टारों के चित्र अंकित थे। उपहारों की दुकान हाल में ही कहीं और चली गई थी और उसकी स्मृति के रूप में केवल मैचलेस गिफ्ट्स साइनबोर्ड बचा रहा था। दुकान की खिड़की के नीचे फुटपाथ में एक जोड़ी लोहे के दरवाजे थे, जिनसे तहखाने और भट्टी-घर में ले जाने वाली पत्थर की सीढ़ियाँ छिपी थीं। इस विस्तृत फुटपाथ को विगत वर्षों में विभिन्न आकारों, नापों और विभिन्न समयों में तैयार किया गया था। इसके कुछ भागों में दरारें पड़ गई थीं या वे धँस गये थे और इन दरारों और धँसे भागों में महीन धूल जम गई थी, जिनमें काँच के छोटे-छोटे चमकते टुकड़े इकट्ठे हो गए थे। मोड़ पर आग बुझाने वाला पानी का एक बदरंग काला बम्बा था। दोनों स्टोरफ्रंटों के प्रवेशद्वारों के बीचोंबीच २६ नम्बर के मकान का मुख्य प्रवेशद्वार था। (यह प्रवेशद्वार मेलबाक्सों और अंतः संचारों से भरे एक उप-कक्ष में खुलता था, और उसके बाद एक तालाबन्द अन्दर का दरवाजा था, जो एक बड़े हाल में खुलता था जिसमें से होकर सीढ़ियों पर या पीछे के आंगन तक जाया जा सकता था।

इस उपहार दुकान की खिड़की की बाईं ओर इसका सामने का प्रवेशद्वार था, जो काली लकड़ी का बना था और जिसमें आदम-कद शीशा लगा था। यह दरवाजा लम्बे संकरे स्टोरफ्रंट में खुलता था, जो अब बिल्कुल वीरान था। भीतर दरवाजे की ठीक दाईं ओर एक चबूतरा था, जो प्रदर्शन-खिड़की के नीचे तक फैला था और बैठने के लिए बिल्कुल उपयुक्त ऊँचाई पर था। वीरान अंधेरे कमरे के दूसरे सिरे पर दो जंगलेदार धुंधले शीशे की खिड़कियाँ थीं, जो आंगन में खुलती थीं। बाएँ वाली खिड़की की बाईं ओर एक छोटा-सा हौज था, जो एक छोटे-से प्रसाधन-कक्ष के बाहर लगा था। प्रसाधन-कक्ष का द्वार स्टोरफ्रंट के सामने की ओर था। स्टोरफ्रंट की बाईं दीवार का दरवाजा एक बरामदे से जुड़ा था, जिससे होकर आंगन में जाया जाता था।

आंगन कंक्रीट-निर्मित ज्यामितिक टुकड़ों से गड़ा गया था और उसकी चारों ओर झाड़ियों के उद्यान और ऊँचे वृक्ष थे। इसमें एक पिकनिक-मेज, एक सीमेंट-निर्मित चिड़ियों का स्नानागार था और खम्भे पर बना एक चिड़ियाघर था और बीचोंबीच झाड़ियों के दो बगीचे थे। आंगन के उत्तर और दक्षिण में ऊँची दीवारें थीं और उसके सामने और पीछे दो खोलियाँ थीं। ऊपर का खुला आसमान राहत प्रदान करता था।

२६ सेकंड एवन्यू के पिछवाड़े की इमारत से इस आंगन की ओर दुमंजिले पर स्थित प्रभुपाद का कमरा था, जहाँ अब वे रह सकते थे, कार्य कर सकते थे और पूजा कर सकते थे। अपने बोवरी के मित्रों की सहायता से उन्होंने अपने नये घर को साफ कर लिया था और उसमें वे सुव्यवस्थित हो गये थे। पिछले कमरे में, जो उनका आफिस था, उन्होंने दीवार के सहारे एक पतला गद्दा बिछा दिया था, जो हाथी-छाप वाली चादर से ढका था और इस गद्दे के सामने अपना धातु का बिना पेंट किया हुआ सूटकेस रख लिया था, जिससे वे डेस्क का काम लेते थे। इस डेस्क पर उन्होंने अपना टाइपराइटर जमा दिया था और उसकी दोनों ओर अपनी पुस्तकें तथा कागज रख लिए थे। यही उनका कार्य-क्षेत्र बन गया था। केसरिया कपड़े में बँधी उनकी पांडुलिपियाँ, *श्रीमद्‌भागवत* की प्रतियाँ और उनकी अल्प निजी वस्तुएँ डेस्क के सामने की अलमारी में रखी थीं। अपने आसन से लगी दीवार पर उन्होंने भगवान् कृष्ण के चित्र से अंकित एक भारतीय कलेंडर रखा था। (चित्र में युवक कृष्ण वंशी बजा रहे थे और उनके ठीक पीछे एक गाय खड़ी थी। भगवान् कृष्ण पृथ्वी-लोक पर खड़े थे, जो उनके पैरों के नीचे एक छोटी पहाड़ी के मुड़े हुए शीर्ष भाग की तरह दिख रहा था।) पूर्वी दीवार में दो खिड़कियाँ थीं, जिनसे होकर सवेरे की रंगबिरंगी सूर्य की किरणें, अग्नि-बचाव सीढ़ी से होकर फर्श पर पड़ती थीं।

दूसरे कमरे में एक सुन्दर काफी की मेज के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। प्रभुपाद ने इसे अपनी वेदिका बना लिया। इस पर उन्होंने महाप्रभु चैतन्य और उनके पार्षदों का मढ़ा

हुआ चित्र स्थापित किया। दीवार पर चतुर्भुज भगवान् विष्णु और अनंत शेष नाग के चित्र वाला एक भारतीय कलेंडर लटकाया। और बोवरी की अटारी की भाँति कपड़े टांगने की रस्सी लगाई।

दोनों कमरे ताजे रंगे गये थे और उनका फर्श साफ सख्त लकड़ी के तख्तों से निर्मित था। स्नान-घर स्वच्छ और प्रयोग के योग्य था; संकरा, सुसज्जित रसोई-घर भी वैसा ही था। प्रभुपाद कभी कभी रसोई-घर की खिड़की के पास खड़े हो जाते और आँगन की दीवार के पार निहारते। वे यहाँ अगले महीने का किराया दे सकने की किसी व्यवस्था के बिना ही चले आये थे।

यद्यपि कार्ल, माइक, कैरोल, जेम्स, बिल और अन्य लोगों ने प्रभुपाद को यहाँ आने के लिए प्रोत्साहित किया था, किन्तु उनमें से कईयों के लिए उनके पास नियमित रूप से आना कष्टकर सिद्ध हो रहा था। परन्तु उनका सद्भाव उनके प्रति बना रहा और उन्हें आशा थी कि नये लोग उनकी सहायता के लिए यहाँ आयेंगे। उनके विचार से प्रभुपाद के अब तक के स्थानों में यह सर्वोत्तम था। वे यहाँ अधिक सुविधा अनुभव करते थे। पैराडॉक्स में बिल, स्वामीजी के नये स्थान का प्रचार करने लगा।

• • •

लोअर ईस्ट साइड में परिवर्तन और मानवीय-यंत्रणा का इतिहास उतना ही पुराना है, जितना न्यूयार्क का। प्रभुपाद के वहाँ पहुँचने के तीन सौ वर्ष पहले वह पीटर स्टूवेसेंट की जागीर का एक अंग था। टाम्पकिन्स स्क्वायर पार्क, आज का सीमा-चिह्न, उस समय एक लवण-कच्छ था, जिसे स्टूवेसेंट का कच्छ या दलदल कहते थे।

लोअर ईस्ट साइड सन् १८४० ई. में पहले झुग्गी-झोपड़ियों की बस्ती बना, जब आयरलैंड के आलू-अकाल से विवश होकर हजारों आयरिश आप्रवासी यहाँ आये और बस गये। दो दशक बाद ये आयरिश, अमेरिका के अगले आप्रवासियों, जर्मनों के लिए उदाहरण बन गये जिनकी संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गई और वे न्यूयार्क नगर का सबसे बड़ा आप्रवासी-समुदाय बन गये। इसके बाद पूर्वी योरप के पोल और यूक्रानी यहूदी आये और १९०० ई. तक लोअर ईस्ट साइड संसार में यहूदियों की सबसे घनी बस्ती का क्षेत्र बन गया। किन्तु अगली पीढ़ी में जब यहूदी उपनगरों और आर्थिक उन्नति की ओर बढ़ने लगे, तो यह घनी बस्ती बिखरने लगी।

इसके पश्चात् १९५० ई. के दशक में पोर्टोरिका द्वीप की गरीबी से तंग आकर वहाँ के हजारों-लाखों आप्रवासियों की या ईस्ट हार्लेम से आने वालों की भीड़ लग गई। इनके बाद हार्लेम और बेडफोर्ड स्टूवेसेंट से हब्शियों का आगमन हुआ। इन दोनों नये समुदायों

के आप्रवासी, पोलों और यूक्रानियों के साथ-साथ दो वर्ग मील क्षेत्र में तंग सड़कों के किनारे चालें बनाकर बस गये, जिससे १९६० ई. के दशक में लोअर ईस्ट साइड की झुग्गी-झोपड़ी वाली बस्ती का निर्माण हुआ।

तत्पश्चात् प्रभुपाद के आगमन के केवल कुछ ही वर्ष पहले लोअर ईस्ट साइड में एक भिन्न प्रकार के झुग्गी-झोपड़ी-निवासियों का उदय हो चुका था। यद्यपि इस अद्‌भुत घटना के कई समाज-वैज्ञानिक और सांस्कृतिक विश्लेषण किये जा चुके हैं, किन्तु इसके कारण की अन्ततः व्याख्या नहीं हो सकी है कि पक्षियों के विशाल झुंड की भाँति अथवा पशुओं के सहज-ज्ञान प्रेरित आव्रजन की भाँति इनका आव्रजन क्यों हुआ और कुछ ही वर्षों में वे फिर कहाँ गायब हो गये।

पहले तो नवागन्तुकों में अधिकतर युवा कलाकार, संगीतज्ञ एवं बुद्धिजीवी थे, जैसाकि प्रभुपाद के बोवरी-निवास के समय के हिप्पी। बाद में मध्यवर्ग के उपेक्षित तरुण आने लगे। चूँकि निकटवर्ती ग्रीनविच विलेज की अपेक्षा यहाँ रहने का स्थान अधिक था और किराया कम था, इसलिए लोअर ईस्ट साइड में उनका जमघट होने लगा। किराया-एजेंटों की बोली में उसका नाम ईस्ट विलेज हो गया। बहुत-से तो रहने का स्थान खोजे बिना ही चले आये थे और उन्होंने चालों के बरामदों में अपने अड्डे जमा दिए थे। सस्ते किराए और स्वच्छन्द जीवन की सम्भावना से आकृष्ट होकर ये मध्यवर्गीय उपेक्षित तरुण, जो राष्ट्रव्यापी युवक आन्दोलन के अग्रव्यूह का निर्माण करने वाले थे और शीघ्र ही जिन्हें प्रचार-माध्यमों में 'हिप्पी' नाम मिलने वाला था, अमेरिका के भौतिकतावादी समृद्ध जीवन के विरोध में लोअर ईस्ट साइड की झुग्गी-झोपड़ियों की जिन्दगी बिताने भटक आये थे।

नये किशोर भगोड़े, मानो नैसर्गिक आवाहन पर, व्यस्क हिप्पियों से आ मिले। इन भगोड़ों के पीछे पुलिस आई, परामर्शी आये, सामाजिक और कल्याण-कार्यकर्ता आये, युवा छात्रावास तथा नशीली दवाओं के परामर्शी केन्द्र के लोग आये। सेंट मार्क प्लेस में नया हिप्पी व्यावसायिक केन्द्र खुल गया, जहाँ पोस्टरों, रेकर्डों आदि की दुकानें, कला-वीथियाँ और पुस्तक-भंडार स्थापित हो गये, जिनमें सिगरेट के कागजों से लेकर हिप्पियों के कपड़े एवं आध्यात्मिक प्रकाश तक सब कुछ मिल सकता था।

हिप्पी लोग लोअर ईस्ट साइड की यात्रा अपने पूर्ववर्ती आप्रवासियों के समान इस पूर्ण-विश्वास के साथ करते थे कि यही उनके रहने का उपयुक्त स्थान है। अन्य युग के योरोपीय आप्रवासियों के लिए न्यूयार्क की बन्दरगाह समृद्धि तथा अवतार का प्रवेशद्वार था, क्योंकि उनकी दृष्टि अन्ततः मैनहट्टन के क्षितिज और स्टेच्यु आफ लिबर्टी (स्वतंत्रता की मूर्ति) पर लगी रहती थी। अब १९६६ ई. में अमरीकी युवक अपनी-अपनी आशाएँ लेकर यहाँ जमघट लगा रहे थे और अपनी नव-प्राप्त गुह्य भूमि—लोअर ईस्ट साइड

झुग्गी-झोपड़े वाले प्रदेश पर दृष्टि गड़ाए थे।

एक ओर हिप्पियों और दूसरी ओर पोर्टोरिकों, पोलैंड तथा यूक्रेन से आये लोगों का सह-अस्तित्व असुविधापूर्ण था। पहले से रहने वाला मूल समुदाय इन नवागन्तुकों का विरोध करता था, क्योंकि वास्तव में वे झुग्गी-झोपड़ियों में रहने के लिए बाध्य नहीं थे, जबकि मूल समुदायों को वहीं रहना था। वास्तविकता तो यह थी कि तरुण नवागन्तुकों में से बहुत-से उन आप्रवासी परिवारों के थे, जो मध्यवर्गीय अमरीकनों के रूप में अपने आपको स्थापित करने के लिए पीढ़ियों से संघर्ष कर चुके थे। जो भी हो, लोअर ईस्ट साइड में युवकों का यह आगमन उतना ही वास्तविक था, जितना वहाँ पोर्टोरिकोवासियों, पोलैंडवासियों या यूक्रेनवासियों का आप्रवासन था, यद्यपि दोनों के अभिप्राय बिल्कुल भिन्न थे।

हिप्पी लोग अपने माँ-बापों के भौतिक भोग, टेलीविजन और विज्ञापनबाजी के स्वाभाविक सुखों से विमुख हो चुके थे, जिनको मध्यवर्गीय अमेरिकन अपने जीवन का क्षणभंगुर उद्देश्य बनाए हुए थे। अपने माँ-बापों, शिक्षकों, धर्मोपदेशकों, जन-नेताओं तथा प्रचार-माध्यमों से उनका मोह-भंग हो चुका था; वे वियतनाम में अमरीकी नीति से असन्तुष्ट थे; वे उन उग्र राजनीतिक आदर्शों के प्रति आकृष्ट हो रहे थे, जो अमेरिका को एक ऐसे निर्दय, स्वार्थरत, शोषक दानव के रूप में उद्‌घाटित कर रहे थे, जिसे या तो अपने आपको सुधारना आवश्यक था या फिर नष्ट हो जाना था। और वे वास्तविक प्रेम, वास्तविक शान्ति, वास्तविक जीवन और वास्तविक आध्यात्मिक चेतना की खोज में लगे हुए थे।

श्रील प्रभुपाद के २६ सेकंड एवन्यू में आगमन की ग्रीष्मऋतु तक, छठे दशक की महान् युवा-क्रान्ति के पहले मोर्चे का प्रवेश 'लोअर ईस्ट साइड' में हो चुका था। यहाँ वे स्वतंत्र थे—सहज गरीबी में रहने के लिए स्वतंत्र थे और कला, संगीत, मादक-द्रव्य-सेवन और यौनाचार द्वारा अपने आपको अभिव्यक्त करने में स्वतंत्र थे। उन दिनों आध्यात्मिक खोज की चर्चा थी। एल.एस.डी. और मारिजुआना जागरूकता के नये लोकों का द्वार खोलने वाली कुंजियाँ थीं। प्राच्य संस्कृतियों और प्राच्य धर्मों से सम्बन्धित धारणाओं का बोल-बाला था। वे नशीली दवाओं, योग, भ्रातृत्व या मात्र स्वच्छन्दता के माध्यम से—किसी तरह आध्यात्मिक बोध प्राप्त कर सकते थे। ऐसा माना जाता था कि प्रत्येक व्यक्ति अपना दिमाग खुला रखे और अपने प्रत्यक्ष अनुभव तथा नशीली दवाओं से परिवर्तित चेतना के साथ-साथ, अपने ग्रहणशील उदार अध्ययन द्वारा अपना निजी सार्वभौम दर्शन विकसित करे। और यदि उनका जीवन निरुद्देश्य प्रतीत हो रहा था, तो कम-से-कम इतना तो था कि वे उस निरर्थक खेल से निकले हुए खिलाड़ी थे, जिसमें खिलाड़ी भौतिक लाभों

के लिए अपनी आत्मा बेच देता है और इस प्रकार ऐसी व्यवस्था का समर्थन करता है, जो सड़-गल गई है।

इस प्रकार १९६६ ई. में हजारों युवक लोअर ईस्ट साइड की सड़कों पर घूम रहे थे, मात्र नशे में रत या सनकी नहीं (यद्यपि वे प्रायः ऐसे होते थे), अपितु वे 'व्यवस्था' तथा लाखों ठेठ अमेरिकनों द्वारा बिताए जाने वाले नित्यप्रति के जीवन की सम्पूर्ण अवहेलना-स्वरूप, जीवन के चरम उत्तरों की खोज में थे।

प्रभुपाद को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि अमेरिका जैसा समृद्ध देश इतने असन्तुष्ट युवकों को जन्म दे सकता है। निस्सन्देह, इससे यह भी सिद्ध हो रहा था कि भौतिक समृद्धि, जो अमरीकी जीवन का प्रमुख लक्षण है, लोगों को सुखी नहीं बना सकी। प्रभुपाद ने अपनी चारों ओर जो असंतोष देखा, वह तात्कालिक राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक या सांस्कृतिक कारणों से नहीं था। न ही झुग्गी-झोपड़ी की अवस्थाएँ या युवा-आक्रोश ही सर्व-महत्त्वपूर्ण वास्तविकताएँ थीं। ये सार्वभौम असंतोष के लक्षण मात्र थे, जिनकी एकमात्र औषध कृष्णभावनामृत था। उन्हें प्रत्येक व्यक्ति की दुर्दशा के प्रति सहानुभूति थी, किन्तु उन्हें सार्वभौम समाधान दिखाई दे रहा था।

'लोअर ईस्ट साइड' आने के पूर्व प्रभुपाद ने अमेरिका में युवा आन्दोलन का कोई अध्ययन नहीं किया था। उन्होंने इतने नवयुवकों के बीच आने की कभी कोई विशेष योजना तक नहीं बनाई थी। किन्तु कलकत्ता से चलने के बाद इन दस महीनों में वे परिस्थितियों द्वारा, या जैसाकि वे समझते थे "कृष्ण की इच्छा द्वारा," एक स्थान से दूसरे स्थान को स्थानान्तरित होते रहे। वे अपने गुरु के आदेश से अमेरिका आये थे और कृष्ण की इच्छा से 'लोअर ईस्ट साइड' आ पहुँचे थे। यहाँ भी उनका उद्देश्य वही था, जो बोवरी में था या अपटाउन या भारत में था। वे अपने गुरु महाराज के आदेश और वैदिक दृष्टिकोण से बँधे हुए थे और ऐसा दृष्टिकोण जिस पर सन् १९६० के दशक में होने वाले उग्र परिवर्तनों का कोई असर होने वाला नहीं था। अब यदि ऐसा हुआ कि अमेरिका के सांस्कृतिक वातावरण में घटित कुछ परिवर्तनों के कारण ये युवक उनके प्रति अधिक ग्रहणशील हों, तो उसका स्वागत होगा और वह भी कृष्ण की इच्छा से होगा।

वास्तव में कलियुग के अशुभ प्रभाव के कारण ऐतिहासिक दृष्टि से यह समय आध्यात्मिक परिष्कार के लिए निकृष्टतम था—हिप्पी क्रान्ति हो, चाहे न हो। और श्रील प्रभुपाद वैदिक संस्कृति की जड़ें एक ऐसे देश में जमाने का प्रयत्न कर रहे थे, जो उससे कहीं अधिक पराया था, जहाँ उनके पूर्ववर्ती किसी आध्यात्मिक गुरु ने प्रयत्न किया था। अतः प्रभुपाद अनुमान लगाते थे कि उनका कार्य अत्यधिक कठिन होगा। फिर, सामान्य रूप से इस बुरे युग में भी प्रभुपाद के 'लोअर ईस्ट साइड' में आगमन के पहले ही

अमरीकी समाज में उस कलियुगी संस्कृति के विरुद्ध असंतोष और विद्रोह के झटके उठने लगे थे, जिससे नवयुवकों के झुंड के झुंड 'लोअर ईस्ट साइड' की गलियों में, सामान्य जीवन से परे के विकल्पों और आध्यात्मिक पूर्णता की खोज में घूमने लगे थे। अपनी रुढ़िबद्ध भौतिकतावादी पृष्ठ-भूमि से बिछुड़े हुए और अब न्यूयार्क के 'लोअर ईस्ट साइड' में एकत्रित हुए ये युवक वही थे जिनसे संयोग से स्वेच्छा से या दैवी विधान से, स्वामीजी के स्टोरफ्रंट में कीर्तन और आध्यात्मिक मार्गदर्शन का उपहार पाने वाली भक्त-मण्डली का निर्माण होना था।

• • •

स्वामीजी के आगमन पर किसी ने विशेष ध्यान नहीं दिया। पड़ोसी कहते कि किसी नये व्यक्ति ने लांड्री की बगल वाली उपहार-दुकान ले ली है। अब खिड़की में एक विचित्र चित्र दिखाई देता, किन्तु कोई नहीं जानता था कि उसका तात्पर्य क्या था। कोई राहगीर देखता कि खिड़की पर *भगवद्गीता* की कक्षाओं की सूचना देने वाला एक कागज का टुकड़ा चिपका था। कुछ लोग उसे पढ़ने के लिए रुक जाते थे, पर किसी की समझ में नहीं आता था कि इसका अर्थ क्या था। वे नहीं जानते थे कि *भगवद्गीता* क्या थी और जो थोड़े-से लोग जानते भी थे, वे यही सोचते कि, "हो सकता है कि यह योग की पुस्तकों का भंडार हो या इसी तरह की कोई अन्य चीज हो।" पड़ोस के पोर्टोरिकोवासी खिड़की में हार्वे कोहन के चित्रों को देखते और बिना कुछ कहे चले जाते। बगल के मोबिल गैस स्टेशन के मैनेजर को इस बात की बिल्कुल चिन्ता नहीं थी कि वहाँ कौन आया है—इससे उसके लिए कोई फर्क नहीं पड़ता था। सड़क की दूसरी ओर कब्र के पत्थर-विक्रेताओं और ठेकेदारों को भी कोई परवाह नहीं थी। और उधर से गुजरने वाली असंख्य कारों और ट्रकों के ड्राइवरों के लिए तो स्वामीजी के स्थान का अस्तित्व ही नहीं था। किन्तु उसके इर्द-गिर्द ऐसे युवक थे, जिन्हें चित्रों से कौतूहल होता था और जो खिड़की के पास यह पढ़ने के लिए जाते थे कि कागज के छोटे टुकड़े पर क्या लिखा है। कुछ को तो *भगवद्गीता* के बारे में जानकारी भी थी, यद्यपि भगवान् चैतन्य और नर्तकों के चित्रों की संगति वे नहीं समझ पाते थे। कुछ ने सोचा क्यों न स्वामी भक्तिवेदान्त की कक्षाओं में चलकर इस मामले के बारे में जानकारी प्राप्त करें।

• • •

जुलाई १९६६

होवर्ड ह्वीलर अपने माट स्ट्रीट के कमरे से हड़बड़ी में फिफ्थ स्ट्रीट-स्थित अपने मित्र

के घर की ओर जा रहा था, जो एक शान्त स्थान था और जहाँ उसे कुछ शान्ति मिलने की आशा थी। वह माट स्ट्रीट से हूस्टन स्ट्रीट पहुँचा, बाएँ मुड़ा और बोवरी के पार भारी यातायात और मार्ग अवरुद्ध करने वाले लावारिसों को लाघंता हुआ पूर्व दिशा में सेकंड एवन्यू की ओर चलने लगा।

होवर्ड : *बोवरी पार करने के बाद सेकंड एवन्यू के ठीक पहले मैंने देखा कि स्वामीजी हंसमुख मुद्रा में फुटपाथ पर टहलते चले जा रहे थे; वे अपना सिर ऊपर उठाए हुए थे और उनका हाथ माला की थैली में था। वे मुझे किसी बहुत परिचित चलचित्र के सुप्रसिद्ध अभिनेता-जैसे लगे। वे चिर-युवा प्रतीत होते थे। वे संन्यासी के परम्परागत केसरिया वस्त्र और विचित्र सफेद नुकीले जूते पहने थे। हूस्टन की ओर से आते हुए वे मुझे ऐसे लगे, मानो अलादीन के चिराग से अकस्मात् जिन्न निकल आया हो।*

छब्बीस वर्षीय होवर्ड एक लम्बा विशाल-काय पुरुष था; उसके बाल लम्बे और काले थे, दाढ़ी घनी थी और वह काले फ्रेम वाला चश्मा पहने था। वह ओहायो स्टेट यूनीवर्सिटी में अंग्रेजी का शिक्षक था और हाल ही में भारत की यात्रा से लौटा था, जहाँ वह एक सच्चे गुरु की खोज में लगा रहा था।

प्रभुपाद ने होवर्ड को देखा और वे दोनों एक साथ रुक गये। होवर्ड के मन में जो पहला प्रश्न उठा, वह उसने पूछा, "क्या आप भारत से आये हैं?"

प्रभुपाद मुस्कराए, "ओह, हाँ और तुम?"

होवर्ड : *मैंने कहा, नहीं। किन्तु मैंने बताया कि मैं हाल ही में भारत से लौटा था और उनके देश और हिन्दू दर्शन में मेरी बहुत रुचि थी। उन्होंने बताया कि वे कलकत्ता से आये थे और न्यूयार्क में लगभग दस महीने से रह रहे थे। उनके नेत्र एक शिशु के नेत्र जैसे स्वच्छ और स्नेहपूर्ण थे और हूस्टन स्ट्रीट में गरजते और घरघराते-भागते हुए ट्रकों के समक्ष खड़े होने पर भी उनसे ऐसी शीतल शान्ति फूट रही थी, जो उनके आसपास की कोलाहलपूर्ण महानगरी से परे किसी वस्तु में अटल अचल भाव से स्थापित थी।*

होवर्ड उस दिन अपने मित्र के घर नहीं गया। वह माट स्ट्रीट में अपने घर, अपने सहवासी मित्रों, कीथ और वाली के पास लौट गया और उनसे और हर एक से, जिसे वह जानता था, उस गुरु के सम्बन्ध में बताया जो उनके बीच अज्ञात कारणों से प्रकट हुए थे।

कीथ और होवर्ड भारत हो आये थे। अब वे विभिन्न प्रकार के आध्यात्मिक दर्शनों में तल्लीन थे और उनके मित्र उनके पास आते थे और आत्मबोध के सम्बन्ध में वार्तालाप किया करते थे। अठारह वर्षीय चक बार्नेट उनके यहाँ नियमित रूप से आता था।

चक : *अटारी का दरवाजा ज्योंही खुलता कि हजारों तिलचट्टे (कॉकरोच) लकड़ी में घुसकर गायब हो जाते। उनसे इतनी गंध निकलती कि आदमी गिर पड़े। इसलिए कीथ*

उस स्थान की सफाई करने और कुछ लोगों को वहाँ से निकालने का प्रयास कर रहा था। वैली, कीथ, होवर्ड और कुछ अन्य लोग मिलकर किराया दे रहे थे। किसी विकल्प के अभाव में वे अपने आध्यात्मिक जीवन की समृद्धि के लिए एल.एस.डी. का उपयोग कर रहे थे। वास्तव में हम सभी ध्यान में सहायता के रूप में नशीली दवाओं का उपयोग कर रहे थे। जो भी हो, वैली, होवर्ड और कीथ किसी सिद्ध आध्यात्मिक गुरु की खोज में थे, जैसाकि हम सब थे।

होवर्ड को अपनी आध्यात्मिक खोज का "पूर्वी दर्शन और धर्म पर पुस्तकें पढ़ने, बहुत सी धूप एवं मोमबत्तियां जलाने तथा ध्यान में सहायता के लिए गांजा, पियोट और एल.एस.डी. के उपयोग का स्मरण था। वास्तव में ध्यान की अपेक्षा नशीली दवाओं का नशा अधिक था। "ध्यान" तो हमारी उत्तेजित अवस्था को हमारी पढ़ाई से सम्बन्धित करने का शिष्ट नाम मात्र था।"

उनहीस वर्षीय कीथ जो दक्षिण के एक बैप्टिस्ट पादरी का लड़का था, कोलम्बिया विश्वविद्यालय में इतिहास विषय में पीएच.डी. का छात्र था। वह "दक्षिणी संयुक्त राज्य में पुनरुत्थानवाद का विकास" विषय पर अपना शोध-प्रबन्ध लिख रहा था। पुराने डेनिम की पतलून, चप्पलें और टी-शर्ट पहने हुए, वह माट स्ट्रीट की मण्डली का गुरु जैसा लगता था।

वैली अपने तीसरे दशक में था। वह फटे पुराने कपड़े पहने, दाढ़ी रखे हुए, प्रबुद्ध एवं बौद्ध साहित्य में सुशिक्षित था। वह सेना में रेडियो इंजीनियर रह चुका था और अपने कक्ष-सहवासियों की तरह इस समय बेकार था। वह एलेन वाट्स, हर्मन्न हेस और अन्य लेखकों की कृतियों का अध्ययन कर रहा था, आत्मबोध के विषय में बातें करता था और एल.एस.डी. का सेवन करता था।

भारत में होवर्ड और कीथ हरद्वार, ऋषिकेश, बनारस एवं अन्य पवित्र नगर देख आये थे। वे भारतीय मन्दिरों के दर्शन कर चुके थे, भांग का स्वाद जान चुके थे और पेचिश के शिकार रह चुके थे। एक दिन शाम को कलकत्ता में उन्होंने साधुओं का एक समुदाय देखा था, जो मंजीरे बजाता हुआ हरे कृष्ण मंत्र का कीर्तन कर रहा था। अनेक पाश्चात्य निवासियों की भाँति होवर्ड और कीथ के लिए भी भारतीय दर्शन का सार शंकर का निर्गुण अद्वैतवाद था, जिसके अनुसार निर्गुण ब्रह्म के अतिरिक्त शेष सब कुछ मिथ्या है। उन्होंने ऐसे ग्रंथ खरीदे थे जिनमे लिखा था, "आप अपनी श्रद्धा भक्ति जिस प्रकार भी व्यक्त करें, वही प्रामाणिक आध्यात्मिक मार्ग है।"

अब तीनों कक्ष-सहवासी—होवर्ड, कीथ और वैली—विभिन्न दर्शनों को मिलाकर अपना निजी मिश्रण तैयार करने लगे। होवर्ड ह्विटमैन, एमर्सन, थूरो या ब्लेक से कुछ अंश

मिलाता; कीथ बाइबिल के कुछ संदर्भों को प्रस्तुत करता और वैली बौद्ध-ज्ञान से कुछ अंश उसमें मिला देता। और वे सब टिमोथी लेयरी, थामस ए केम्पिस और अन्य अनेकों के विषय में बातें करते रहते। उनका यह निजी दर्शन उस समय नये सिरे से पुनर्मूल्यांकन का विषय बन जाता, जब उनमें से किसी को एल.एस.डी. के प्रभाव में नई ब्रह्माण्डीय अन्तर्दृष्टि की अनुभूति होती।

यही वह मंडली थी, जिसके पास उस दिन जुलाई में होवर्ड लौटकर आया था। उत्तेजित अवस्था में उन लोगों को स्वामीजी के विषय में बतलाया कि वे कैसे दिखते थे और उन्होंने क्या कहा था। होवर्ड ने बतलाया कि किस तरह एक साथ खड़े होने और बातें करने के बाद स्वामीजी ने उससे निकट में ही सेकंड एवन्यू-स्थित अपने स्थान का उल्लेख किया था, जहाँ वे कुछ कक्षाएं चलाने की योजना बना रहे थे।

होवर्ड : *मैं उनके साथ कोने तक गया। उन्होंने फर्स्ट और सेकंड स्ट्रीट के बीच एक छोटी स्टोरफ्रंट इमारत की ओर संकेत किया, जो मॉबिल-स्टेशन की बगल में थी। यह कुतूहलपूर्ण वस्तुओं की दुकान रह चुकी थी और किसी ने उसकी खिड़की पर 'मैचलेस गिफ्ट्स' शब्द लिख रखे थे। उस समय मैं इसका अनुभव नहीं कर सका कि ये शब्द किस तरह भविष्यवाणी जैसे थे। "क्या यह अच्छा स्थान है?" उन्होंने पूछा। मैंने कहा कि मेरी समझ से " है"। मुझे इसका कोई अनुमान नहीं था कि वे अपनी "कक्षाओं" में क्या देने जा रहे थे, किन्तु मैं यह जानता था कि मेरे सभी मित्र यह जानकर प्रसन्न होंगे कि एक भारतीय स्वामी हमारे पड़ोस में रहने आ रहे थे।*

बात फैल गई। यद्यपि कार्ल इयरजेन्स और कुछ अन्य लोगों के लिए बोवरी तथा चाइनाटाउन से यहाँ तक आना सरल न था, क्योंकि उनके पास और बहुत-से काम थे। उनमें से एक राय डुबोइस, जो पच्चीस वर्ष का था और कॉमिक पुस्तकें लिखता था, बोवरी में प्रभुपाद से मिल चुका था और जब उसने स्वामीजी के नये स्थान के बारे में सुना, तो उसकी इच्छा उनसे मिलने की हुई। जेम्स ग्रीन और बिल एप्स्टीन स्वामीजी को भूले नहीं थे और वे भी वहाँ आना चाहते थे। पैराडॉक्स भोजनालय अभी भी एक जीवन्त सम्बन्ध-सूत्र बना था और अभिरुचि रखने वाले नये लोगों को आकृष्ट करता रहता था। अन्य लोग भी, जैसे स्टेफेन ग्वारिनो, खिड़की पर स्वामीजी का नामपट्ट देखते थे। स्टीव की अवस्था छब्बीस वर्ष की थी; वह नगर के कल्याण-विभाग में काम करता था; एक दिन जब दोपहर के भोजन के अवकाश में वह फिफ्थ-स्ट्रीट एवं सेकन्ड एवन्यू पर स्थित कल्याण-कार्यालय से घर जा रहा था, तो उसने खिड़की पर लगा स्वामीजी का नामपट्ट देखा। वह उन दिनों गीता का एक सस्ता संस्करण पढ़ रहा था और उसने मन में निश्चय किया कि वह स्वामीजी की कक्षा में जायेगा।

उस दिन होवर्ड ने भी, जब वह स्टोरफ्रंट के सामने स्वामीजी के साथ खड़ा था, खिड़की पर लगी उनकी छोटी-सी नामपट्टिका देख ली थी :

भगवद्गीता पर व्याख्यान
ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी
सोम, बुध तथा शुक्रवार
७ बजे से ९ बजे सायंकाल

क्या तुम अपने मित्रों के लाओगे ?" प्रभुपाद ने पूछा था।

"हाँ" होवर्ड ने वादा किया था, "सोमवार को संध्या-समय।"

• • •

ग्रीष्मऋतु की संध्या को गर्मी थी और स्टोरफ्रंट में पीछे की खिड़कियाँ और सामने का दरवाजा पूरे खुले थे। बहुत-से युवक, जिनमें कुछ काले डेनिम की पतलूनें और चौड़ी, धूमिल पट्टियों वाली खुले बटन की खेल की कमीजें पहने थे और जिन्होंने अपने पुराने जूते सामने के दरवाजे पर उतार दिए थे, अब फर्श पर बैठे थे। इनमें से अधिकतर लोअर ईस्ट साइड से आये थे और यहाँ पहुँचने में किसी को कोई विशेष तकलीफ नहीं उठानी पड़ी थी। वह छोटा-सा कमरा खाली था, उसमें न कोई चित्र था, न सामान था, न कालीन था, न कोई कुर्सी ही थी। केवल कुछ सादी चटाइयाँ बिछी थीं। कमरे के बीच छत से केवल एक बल्ब लटक रहा था। सात बजे थे और लगभग एक दर्जन लोग एकत्र हो चुके थे; तब स्वामीजी ने एकाएक एक तरफ का दरवाजा खोला और कमरे में प्रवेश किया।

वे कोई कमीज नहीं पहने थे और जो केसरिया वस्त्र उनके शरीर को आवेष्टित किये था, उसने उनकी बाहों और वक्षस्थल के कुछ भाग को खुला छोड़ दिया था। उनका रंग चिकना सुनहरा था। अपने मुंडित सिर, लम्बे कान और गम्भीर मुद्रा के कारण वे ध्यानमग्न बुद्ध की प्रतिमा की भाँति दिख रहे थे। वे वृद्ध थे, फिर भी उनकी भंगिमा सीधी, अनथक और तेजमय थी। उनका ललाट पीली मिट्टी के वैष्णव तिलक से अलंकृत था। उन्होंने बढ़ी दाढ़ी वाले होवर्ड को पहचान लिया और वे मुस्कराए: "तुम अपने मित्रों को लाए हो?"

"हाँ" होवर्ड ने अपनी ऊँची, गूँजने वाली वाणी में कहा।

"ओह, बहुत अच्छा।"

प्रभुपाद ने अपने सफेद जूते उतार दिए और वे एक पतली चटाई पर बैठ गये। श्रोता-

मंडली की ओर उन्मुख होकर उन्होंने संकेत किया कि सभी लोग बैठ जायें। कई पीतल के मंजीरों कि जाड़ों का वितरण करके उन्होंने संक्षेप में ताल का प्रदर्शन किया : एक... दो... तीन। वे मंजीरे बजाने लगे—उससे आश्चर्यजनक घनघनोन की ध्वनि निकलने लगी। उन्होंने गाना आरम्भ किया : हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे। अब श्रोताओं की बारी आई। "कीर्तन करो" उन्होंने कहा। कुछ पहले से जानते थे; दूसरों ने धीरे-धीरे सीखा और कुछ आवर्तनों के बाद सब एकसाथ कीर्तन करने लगे।

इनमें से अधिकतर युवक और वहाँ उपस्थित थोड़ी-सी युवतियाँ, कभी-न-कभी विस्तृत चेतना के नवीन संसार की खोज में आध्यात्मिक यात्रा कर चुके थे। वे निडर होकर तथा अंधाधुंध एल.एस.डी., पीयोट और ऐन्द्रजालिक नवाबी जीवन के भंवरमय वर्जित सागर में प्रविष्ट हो चुके थे। चेतावनियों की उपेक्षा करते हुए उन्होंने हर खतरा मोल लेकर ऐसा किया था। फिर भी उनका साहस 'स्व' की अतिरिक्त दिशाओं को खोजने, सामान्य स्थिति से आगे बढ़ जाने का उनका औत्सुक्य प्रशंसा के योग्य था, भले ही वे यह न जानते हों कि आगे क्या था अथवा वे सामान्य जीवन की सुविधाएँ पुनः प्राप्त कर सकेंगे या नहीं। जो भी हो, उन्हें जिस भी सत्य की प्राप्ति हुई हो, वे अतृप्त रहे थे और वे जिस भी संसार में पहुँचे हों, ये युवा आध्यात्मिक यात्री बार-बार 'लोअर ईस्ट साइड' को लौटते रहे थे। अब वे हरे कृष्ण मंत्र की बानगी ले रहे थे।

जब स्वामीजी के मंजीरों और उनकी सुरीली वाणी से कीर्तन एकाएक छलक उठा, तो उन्हें तत्काल अनुभव हुआ कि यह तो कोई बहुत दूर तक पहुँचने वाली वस्तु है। उन्हें 'बाह्य यात्रा' का यह अच्छा अवसर प्रतीत हुआ और वे स्वेच्छापूर्वक उसके साथ प्रवाहित होने लगे। वे अपने मनों को समर्पित करने और कीर्तन का जो मूल्य था, उसकी सीमाओं का अनुसंधान करने को तत्पर हो गये। उनमें से अधिकतर कीर्तन मंत्र का सम्बन्ध रहस्यमय उपनिषदों और गीता से पहले ही जोड़ चुके थे, जिनसे उन्हें रहस्यमय शब्दों में आवाहन मिला था : "शाश्वत चेतना... मोहनिवारक।" किन्तु उन्होंने सोचा यह भारतीय मंत्र, चाहे जैसा हो, आने दो। इसकी तरंगें हमें दूर, ऊँचाई तक ले जायें। हम इसे ग्रहण करें; इसके प्रभाव का स्वागत करें। इसका जो भी मूल्य चुकाना पड़े, इसे आने दो। कीर्तन बहुत सरल और स्वाभाविक लग रहा था। यह मधुर था और इससे किसी को कोई क्षति होने वाली नहीं थी। स्वयं अपने ढंग का यह अभूतपूर्व था।

अपने आन्तरिक भावावेश में कीर्तन करते हुए प्रभुपाद ने अपनी बहुरंगी-भक्त-मंडली की ओर देखा। वे अब एक नयी दुनिया में कार्यारंभ कर रहे थे। मंजीरो की ध्वनि के साथ, हरे कृष्ण मंत्र का स्वर अनुदेशन और अनुगमन के आधार पर बढ़ता गया, जिससे वह

सन्ध्या परिपूरित हो गई। कुछ पड़ोसी नाराज हुए; पोर्टोरिकन बच्चे मुग्ध होकर दरवाजे और खिड़की पर इकट्ठे होकर झाँकने लगे। गोधूलि बेला का आगमन हुआ।

वह प्रार्थना विदेशी थी, फिर भी कोई भी देख सकता था कि एक स्वामीजी उस पुरातन प्रार्थना को ईश्वर की प्रशंसा में गा रहे थे। वह न तो राक था, न जाज। स्वामीजी एक पवित्र पुरुष थे, जो धर्म का सार्वजनिक प्रदर्शन कर रहे थे। किन्तु मिश्रण विचित्र था : एक वृद्ध भारतीय स्वामी एक प्राचीन मंत्र का कीर्तन कर रहे थे और स्टोरफ्रंट में भरे हुए तरुण अमरीकी हिप्पी उनके साथ उसको गा रहे थे।

प्रभुपाद गाये जा रहे थे, उनका घुटा हुआ सिर ऊँचे उठा हुआ और एक ओर को कुछ झुका था; उनका शरीर भावावेश में कुछ-कुछ काँप रहा था। वे पूरे विश्वास के साथ शुद्ध भक्ति में तल्लीन, मंत्र के कीर्तन की अगवानी करते जा रहे थे और तरुण उनका अनुसरण कर रहे थे। उधर से गुजरने वाले अधिकाधिक लोग स्टोरफ्रंट की खिड़की और खुले दरवाजे की ओर आकृष्ट होते रहे। कुछ ने उपहास किया, किन्तु कीर्तन जोरों पर था। कीर्तन की ध्वनि में मोटर-कारों के हार्न भी खो जाते थे। आटो-इंजिनों के स्पंदन और ट्रकों की घड़घड़ाहट जारी थे, किन्तु अब वे बहुत दूर लगते थे, किसी का उन पर ध्यान नहीं जाता था।

खाली कमरे में बिजली के धुंधले प्रकाश के नीचे एक जन-समुदाय अपने नेता का अनुसरण करता हुआ कीर्तन कर रहा था, जो एक मंद, हिचक-भरे सूमह-गान से क्रमश: आगे बढ़ता हुआ स्वरों के लगभग सामंजस्य में बदल रहा था। वे ताली बजा रहे थे और गा रहे थे और उसके रहस्यों को जानने की आशा में उसमें सब कुछ मिलाते जा रहे थे। स्वामीजी केवल पाँच मिनट का नमूने का प्रदर्शन नहीं कर रहे थे। इस समय वे उनके नेता और अज्ञात लोक के मार्गदर्शक बने थे। होवर्ड और कीथ का कलकत्ता में थोड़ी देर तक दास्ता पड़ा था; उससे वे बेगाने ही रह गये थे। इस तरह का कीर्तन और वह भी लोअर ईस्ट साइड के मध्य, जिसमें उनका मार्गदर्शन एक सच्चा स्वामी कर रहा हो, उनके सामने इसके पहले कभी नहीं हुआ था।

उनके मनों में आध्यात्मिक आकांक्षाएँ थीं कि वे ईश्वर का साक्षात् दर्शन करेंगे, हिन्दू उपदेशों में वर्णित स्वप्न-चित्र और दिव्य दृश्य देखेंगे और उनकी मान्यता थी कि "वह" नितान्त निर्गुण प्रकाश है। प्रभुपाद का सामना इस तरह के एक समुदाय से बोवरी में हो चुका था और वे समझ रहे थे कि यह समुदाय इस मंत्र को न तो समुचित अनुशासित सम्मान दे रहा था, न ज्ञानपूर्वक उसे ग्रहण कर रहा था। किन्तु उन्होंने उसे अपने ढंग से कीर्तन करने दिया। समय के साथ आध्यात्मिक ध्वनि के प्रति उनमें समर्पण का भाव आयेगा, उनकी परिशुद्धि होगी और हरे कृष्ण मंत्र के गायन और श्रवण से उन्हें आत्म-

ज्ञान तथा आनन्द का अनुभव होगा।

उन्होंने कीर्तन बन्द कर दिया। कीर्तन से संसार पीछे छूट गया था, किन्तु लोअर ईस्ट साइड उधर ही पुनः दौड़ पड़ा। दरवाजे पर खड़े बच्चे चहकने और हँसने लगे। कारों और ट्रकों की घड़घड़ाहट फिर सुनाई देने लगी। और पास के एक घर से आवाज आई कि शान्त रहिए। साढ़े-सात बज चुके थे। आधा घंटा बीत गया था।

• • •

अब आज, हम चौथा अध्याय आरम्भ करेंगे कि भगवान् कृष्ण अर्जुन से क्या कहते हैं।

उनका व्याख्यान बहुत प्रारम्भिक हैं फिर भी (अशान्त युवकों के लिए) वह अत्यन्त दार्शनिक है। कुछ तो उसे बिल्कुल नहीं समझ सकते और स्वामीजी के प्रथम शब्द सुनते ही उद्दण्डता से खड़े हो जाते हैं, सामने के दरवाजे पर अपने जूते पहनते हैं और सड़क में लौट जाते हैं। अन्य युवक गायन बन्द होते ही बाहर चले गये हैं । तब भी अब तक के समुदायों में यह उनका सर्वोत्तम समुदाय है। बोवरी की मण्डली में से कुछ उपस्थित हैं। माट स्ट्रीट के लड़के आये हैं और वे विशेष रूप से एक गुरु की तलाश में हैं। उपस्थित समुदाय में से बहुत-से गीता पढ़ चुके हैं—और उसे सुनकर यह स्वीकार करने में उन्हें गर्व का अनुभव नहीं होता कि वह उनकी समझ में नहीं आई।

उनके दरवाजे के बाहर यह एक अन्य गर्म और शोरगुल से भरी जुलाई की संध्या है। बच्चे गर्मी के अवकाश पर हैं और वे अँधेरा होने तक सड़क में रुके रहते हैं। पास ही एक बड़ा-सा कुत्ता भौंक रहा है—*भौं, भौं, भौं*—यातायात से निरंतर शोर हो रहा है; खिड़की के ठीक बाहर छोटी लड़कियाँ चीख रही हैं; इन सबके कारण व्याख्यान देना कठिन हो रहा है। बच्चों, यातायात और कुत्तों से उत्पन्न व्यवधान के बावजूद वे दरवाजा खुला रखना चाहते हैं। यदि वह बन्द मिलता है, तो वे कहते हैं, "यह बन्द क्यों है? लोग भीतर आ सकते हैं।" वे निर्भीक भाव से संस्कृत उद्धरण देते हुए अपनी श्रोता-मण्डली को बाँधे हुए और अपने अत्यावश्यक सन्देश को समझाते हुए आगे बढ़ते जाते हैं, जबकि निरन्तर *भौं, भौं, भौं* की कर्कश ध्वनि उनके प्रत्येक शब्द से स्पर्धा करती रहती है।

स्पेन की चुड़ैलों की तरह *ईईईईक...! याआआआ...!* की ध्वनि में चीखती हुई लड़कियाँ सारे ब्लाक को अशान्त बना देती हैं। दूर अपनी खिड़की से एक व्यक्ति चिल्लाता है—"यहाँ से भाग जाओ, यहाँ से भाग जाओ।"

प्रभुपाद : *उनसे कहो कि शोर न करें।*

राय (मन्दिर में बैठे लड़कों में से एक) : *वह व्यक्ति अब बच्चों को भगा रहा है।*

प्रभुपाद : *हाँ, हाँ, ये बच्चे व्यवधान उत्पन्न कर रहे हैं। उनसे कहो...।*

राय : *हाँ, वह व्यक्ति उन्हें अभी यहाँ से भगा रहा है।*

प्रभुपाद : *वे शोर कर रहे हैं।*

राय : *हाँ, वह उन्हें अब भगा रहा है।*

वह व्यक्ति बच्चों को दूर भगा देता है, किन्तु वे फिर लौट आयेंगे। आप बच्चों को सड़क से हटा नहीं सकते—वे वहीं रहते हैं। और उस बड़े कुत्ते का भौंकना कभी बन्द नहीं होता। और कारों को कौन बन्द कर सकता है? कारें तो वहाँ हर समय होती हैं। प्रभुपाद कारों का प्रयोग एक उदाहरण देने के लिए करते हैं : जब सेकंड एवन्यू पर कोई कार क्षण-भर के लिए हमारी दृष्टि में आती है, तो निश्चय ही हम यह नहीं सोचते कि हमारे देखने के पहले उसका अस्तित्व नहीं था या हमारी दृष्टि से ओझल होते ही उसके अस्तित्व की समाप्ति हो जायेगी। उसी तरह जब कृष्ण इस लोक से दूसरे लोक को चले जाते हैं, तो इसका यह तात्पर्य नहीं है कि अब उनका अस्तित्व नहीं रह गया, यद्यपि ऐसा प्रतीत हो सकता है। वास्तव में, वे केवल हमारी दृष्टि से बाहर गये हैं। कृष्ण और उनके अवतार इस भौतिक सृष्टि के असंख्य ब्रह्माण्डों के अनंत लोकों में निरन्तर प्रकट तथा अन्तर्धान होते रहते हैं।

प्रभुपाद के एक-एक शब्द बोलने के बीच शोर करती हुई कारें हमेशा भागती रहती हैं। दरवाजा खुला है और वे कार्बन मोनोक्साइड, एस्फाल्ट, गड़गड़ाते टायरों और निरन्तर यातायात की लहरों की नदी के तट पर आसीन हैं। वे वृन्दावन में यमुना के किनारों से बहुत दूर चले आये हैं, जहाँ युगों से महान् ऋषि और मुनि कृष्णभावनामृत की चर्चा करने के लिए एकत्र होते रहे हैं। किन्तु उनके श्रोता 'इस' दृश्य के मध्य 'यहाँ' रहते हैं, इसलिए वे सेकंड एवन्यू के यातायात रूपी उमड़ती नदी के तट पर चिर-नवीन सन्देश का उद्घोष करने यहाँ आये हैं।

वे अब भी उसी बिन्दु पर बल दे रहे हैं : आप कृष्णभावनाभावित होकर जो कुछ करते हैं, वह कितना भी कम क्यों न हो, आपके लिए अन्ततः कल्याणकारी है। अपटाउन या बोवरी की अपेक्षा वे अब और भी अधिक आग्रह के साथ अपने श्रोताओं को पूर्णरूप से कृष्णभावनामृत को अपनाने और भक्त बनने को आमंत्रित कर रहे हैं। वे उन्हें विश्वास दिलाते हैं...

अर्जुन की भाँति कोई भी कृष्ण का भक्त और सखा बन सकता है। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि भगवान् चैतन्य के प्रमुख शिष्य समाज के तथाकथित पतितों में से थे। उन्होंने हरिदास ठाकुर को अपने आध्यात्मिक प्रकार में सर्वोच्च स्थान पर नियुक्त किया, यद्यपि उनका जन्म एक मुसलमान परिवार में हुआ था। इसलिए किसी के लिए कोई

प्रतिबन्ध नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति आध्यात्मिक गुरु बन सकता है, शर्त यह है कि वह कृष्ण-विज्ञान को जानता हो। यह भगवद्गीता कृष्ण-विज्ञान है। और यदि कोई इसे पूर्णरूप से जानता है, तो वह आध्यात्मिक गुरु बन जाता है।

और हरे कृष्ण का यह दिव्य स्पन्दन हमारे मन रूपी दर्पण के मैल को साफ करके हमारी सहायता करेगा। हमने अपने मन में भौतिकता की मैल जमा कर रखी है। जिस तरह सेकंड एवन्यू में मोटर-कारों के लगातार यातायात से हर वस्तु पर मैल बैठती रहती है, उसी तरह हमारे सांसारिक कार्यकलापों के हेर-फेर से हमारे मनों पर भौतिकता की कुछ मैल इकट्ठी होती जाती है, इसलिए हम वस्तुओं को उनके सही परिप्रेक्ष्य में नहीं देख पाते। अतएव हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे/ हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे की दिव्य ध्वनि के स्पन्दन की इस प्रक्रिया से यह मैल धुल जायेगी। और ज्योंही यह मैल साफ हो जायेगी, आप चेतन आत्मा के रूप में अपनी वास्तविक वैधानिक स्थिति को उसी तरह देख सकेंगे, जैसे अपना सुन्दर चेहरा स्वच्छ दर्पण में देख सकते हैं। संस्कृत भाषा में कहा गया है भव-महादावाग्नि। इसे महाप्रभु चैतन्य ने कहा था। आपने महाप्रभु चैतन्य का चित्र सामने की खिड़की में देखा है। वे नृत्य और हरे कृष्ण कीर्तन कर रहे हैं। इसलिए इससे फर्क नहीं पड़ता कि कोई व्यक्ति पहले क्या पाप-कर्म कर रहा था। हो सकता है कि कोई व्यक्ति शुरु में पूर्ण न हो सके, किन्तु यदि वह सेवा करने लगता है, तो वह शुद्ध बन जाएगा।

एकाएक बोवरी का एक लावारिस सीटी बजाता और शराबी-जैसा चिल्लाता हुआ प्रवेश करता है। श्रोता-मण्डली बैठी रहती है; उनकी समझ में नहीं आता कि क्या करें।

शराबी : *आप कैसे हैं? मैं अभी लौट जाऊँगा। मैं एक दूसरी चीज लाया हूँ।*

प्रभुपाद : *गड़बड़ी मत करो। बैठ जाओ। हम गम्भीर चर्चा कर रहे हैं।*

शराबी : *मैं उसे वहाँ रख दूँगा। एक गिरजाघर में। ठीक है न! मैं तुरन्त लौट जाऊँगा।*

वह व्यक्ति सफेद बालों, छोटी भूरी दाढ़ी वाला है। उसके कपड़े मैले-कुचैले हैं। उसकी गंध सारे मन्दिर में फैल जाती है। किन्तु वह अचानक झुककर दरवाजे से बाहर निकल जाता है और गायब हो जाता है। भक्तिवेदान्त किंचित् मुसकराते हैं और फिर तुरन्त अपना व्याख्यान आरम्भ कर देते हैं।

अतएव इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि कोई व्यक्ति पहले क्या कर रहा था, यदि वह कृष्णभावनामृत में प्रवृत्त होता है—हरे कृष्ण का कीर्तन और भगवद्गीता का अध्ययन करता है—तो यह समझना चाहिए कि वह संत है। वह संत-स्वभाव पुरुष है। अपि चेत्सुदुराचारो। इसकी चिन्ता न करें यदि विगत संसर्गों के कारण उसमें कुछ बाह्य अनैतिक आदते हैं। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। किसी तरह व्यक्ति को

कृष्णभावनाभावित हो जाना चाहिए और तब धीरे धीरे ज्यों-ज्यों वह कृष्णभावनामृत की प्रक्रिया का पालन करता जायेगा, वह संत-पुरुष बन जायेगा।

आदत दूसरा स्वभाव कैसे बन जाती है, इस विषय में एक कहानी है। एक चोर था और वह कुछ मित्रों के साथ तीर्थयात्रा पर गया। जब रात में अन्य सब सो रहे थे, तो क्योंकि उसका स्वभाव रात में चोरी करने का था, वह उठा और किसी का सामान चुराने लगा। किन्तु तब उसे विचार आया, "ओह! मैं तीर्थयात्रा के लिए इस पवित्र स्थान में आया हूँ, तो भी आदत-वश मैं चोरी कर रहा हूँ। नहीं, मैं ऐसा नहीं करूँगा।"

इसलिए उसने एक का थैला उठाया और उसे दूसरे के स्थान पर रख दिया और रात-भर वह यात्रियों के थैले एक स्थान से दूसरे स्थान पर रखता रहा। किन्तु विवेक-वश, क्योंकि वह तीर्थयात्रा पर था, उसने सचमुच किसी की कोई चीज ली नहीं। इसलिए जब सवेरे लोग उठे और उन्होंने चारों ओर देखा तो वे बोले, "मेरा थैला कहाँ है? मुझे दिखाई नहीं देता।" और दूसरे आदमी ने कहा, "मुझे मेरा थैला दिखाई नहीं देता।" तब एक ने कहा, "ओह! आपका थैला वहाँ है।" इस तरह वहाँ कुछ वाद-विवाद हुआ। उन्होंने सोचा, "मामला क्या है? यह सब कैसे हुआ?"

तब चोर उठा और उसने सभी मित्रों को बताया, "प्रिय सज्जनो, मैं व्यवसाय से चोर हूँ और चूँकि मेरी आदत रात में चोरी करने की है, इसलिए मैं अपने आपको रोक नहीं सका। किन्तु मैंने सोचा, 'मैं यहाँ पवित्र स्थान में आया हूँ, इसलिए मैं यह नहीं करूँगा।' अतः मैंने एक व्यक्ति का थैला दूसरे व्यक्ति के स्थान में रख दिया हैं। कृपया मुझे क्षमा करें।"

इसलिए यह आदत की बात है। वह चोर ऐसा करना नहीं चाहता, किन्तु ऐसा करने की उसकी आदत है। उसने चोरी न करने का निश्चय कर लिया है, किन्तु आदत-वश वह कभी कभी चोरी करता है। इसलिए कृष्ण कहते हैं कि ऐसी स्थितियों में जब एक व्यक्ति ने अपनी अनैतिक आदतों को त्याग देने और कृष्णभावनामृत की प्रक्रिया को अपनाने का निश्चय कर लिया है और संयोग से यदि वह कोई ऐसा कार्य कर भी बैठता है, जिसे समाज की दृष्टि में अनैतिक कहा जाता है, तो उस पर ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए। दूसरे श्लोक में कृष्ण कहते हैं, क्षिप्रं भवति धर्मात्मा: क्योंकि उसने कृष्णभावनामृत के साथ सामंजस्य स्थापित कर लिया है, इसलिए निश्चित है कि वह शीघ्र संत बन जायेगा।

अचानक पहले वाला उपेक्षित व्यक्ति पुनः लौट पड़ता है और अपने आगमन की सूचना "आप कैसे हैं?" कहकर देता है। वह कुछ लिए है। वह भीड़ के बीच से अपना रास्ता बनाता हुआ सीधे मन्दिर के पिछले भाग तक चला जाता है, जहाँ स्वामीजी बैठे हैं। वह शौचालय का दरवाजा खोलता है, उसके अन्दर शौचालय के कागज (टिशु पेपर) के

दो पुलिन्दे रखता है, दरवाजा बन्द करता है और तब सिंक (हौदी) की ओर मुड़ता है, उसके ऊपर कुछ कागजी तौलिए रखता है और शौचालय के कागज के दो और पुलिन्दे तथा कुछ और कागजी तौलिए सिंक के नीचे रखता है। तब वह खड़ा हो जाता है और स्वामीजी तथा श्रोता-मण्डली की ओर मुड़ता है। स्वामीजी उसे देख रहे हैं और पूछते हैं, "यह क्या है?" अब वह आवारा चुप हो जाता है; उसने अपना काम कर लिया है। प्रभुपाद हँसने लगते हैं और अपने अभ्यागत को, जो अब द्वार की ओर बढ़ रहा है, धन्यवाद देते हैं, "आपको धन्यवाद, आपको बहुत-बहुत धन्यवाद।" आवारा चला जाता है। प्रभुपाद अपनी श्रोता-मण्डली को सम्बोधित करते हैं, "जरा देखिए। सेवा करने की प्रवृत्ति स्वाभाविक है। जरा देखिए। वह व्यवस्थित-दशा में नहीं है, किन्तु उसने सोचा, 'यहाँ कुछ हो रहा है। मैं भी कुछ सेवा करूँ।' जरा देखिए, यह किस तरह स्वयं-स्फूर्त है। यह स्वाभाविक है।"

श्रोता-मण्डली में बैठे नवयुवक एक-दूसरे की ओर देखते हैं। यह सचमुच कितनी दिव्य बात है—पहले तो पीतल के मंजीरों के साथ कीर्तन, फिर बुद्ध के समान दिखते हुए स्वामीजी की कृष्ण के सम्बन्ध में वार्ता और फिर कीर्तन और अब इस आवारे की यह सनक। किन्तु स्वामीजी शान्त बने रहते हैं, वे वास्तव में शान्त हैं। वे फर्श पर निर्भय बैठे हैं, आत्मा के विषय में अपना दर्शन समझा रहे हैं और हम उनके साथ संत बन गये हैं; वह पुराना शराबी भी संत बन जाता है।

लगभग एक घंटा हो गया है, कुत्ता भौंक रहा है और बच्चे चिल्ला रहे हैं।

• • •

प्रभुपाद अपने श्रोताओं से, जो अभी आध्यात्मिक जीवन आरम्भ ही कर रहे हैं, मांग कर रहे हैं कि वे कृष्णभावनामृत के पूर्णतया समर्पित प्रचारक बन जायें : "*भगवद्गीता* में आप पाएँगे कि जो कोई भी *भगवद्गीता* के सन्देश का संसार के लोगों में प्रचार करता है, वह कृष्ण का परम प्रिय भक्त बन जाता है। इसलिए हम लोगों का यह कर्तव्य है कि हम इस '*भगवद्गीता* के सिद्धान्तों' का लोगों को कृष्णभावनाभावित बनाने के लिए प्रचार करें।" प्रभुपाद उन्हें यह बताने की प्रतीक्षा नहीं कर सकते—भले ही वे तैयार न हों। यह कार्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। संसार को कृष्णभावनामृत के प्रचारकों की आवश्यकता है।

कृष्णभावनामृत के अभाव में लोग दुख भोग रहे हैं, इसलिए सारे संसार के लाभ के लिए हम में से प्रत्येक को कृष्णभावनामृत के प्रचार-कार्य में लग जाना चाहिए। चैतन्य महाप्रभु ने, जिनका चित्र हमारे स्टोर के सामने लगा है, कृष्णभावनामृत के दर्शन का प्रचार बहुत अच्छी तरह किया है। महाप्रभु कहते हैं, "तुम सब मेरा आदेश मानो और

आध्यात्मिक गुरु बन जाओ।" महाप्रभु चैतन्य का आदेश है कि तुम प्रत्येक देश में जाओ और कृष्णभावनामृत का प्रचार करो। इसलिए यदि हम भगवद्गीता यथारूप, के प्रचार का कार्य बिना व्याख्या के और बिना किसी सांसारिक प्रयोजन के आरम्भ करते हैं, तो कृष्ण का कथन है कि वह पूरा होगा। सांसारिक कार्यकलाप के प्रति हम में कोई आकर्षण नहीं होना चाहिए, अन्यथा हम कृष्ण को प्राप्त नहीं कर सकते। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि हम संसार के लोगों के प्रति विरोधी भाव रखें। नहीं, हमारा कर्तव्य है कि हम उन्हें यह सर्वोच्च शिक्षा दें कि—कृष्णभावनाभावित बनो और—

श्रोता-मण्डली में एक युवक ऐसा है, जो अपने आपको नियंत्रण में नहीं रख सकता और अपना असम्बद्ध भाषण करने लगता है।

प्रभुपाद : *नहीं, तुम अभी बाधा नहीं डाल सकते।*

युवक (खड़ा होकर) : *अब जरा एक मिनट रुको, भले आदमी। (अन्य लोग उसे शान्त करने की कोशिश करते हैं और झगड़ा होने लगता है।)*

प्रभुपाद : *नहीं, नहीं, नहीं, नहीं। अभी नहीं। नहीं, नहीं, तुम अभी नहीं पूछ सकते।*

युवक : *ठीक, मैं कुछ बोलना चाहता हूँ।*

प्रभुपाद : *नहीं, तुम अभी नहीं पूछ सकते।*

युवक : *किन्तु एक मिनट ठहरो, भले आदमी, ठहरो।*

प्रभुपाद : *तुम अभी हस्तक्षेप क्यों करना चाहते हो। प्रश्नोत्तर के लिए हमारा समय निश्चित है।*

श्रोता-मंडली के अन्य लोग : उसे पूछ लेने दो। हाँ, उसे बोलने दो। *(युवक के समर्थक उसके बोलने के अधिकार का समर्थन करते हैं, जबकि अन्य लोग उसे चुप कराने का प्रयत्न करते हैं।)*

दूसरा व्यक्ति : *मुझे एक प्रश्न पूछना है। कृपा करें। आप किसी व्यक्ति से कब तक आशा करते हैं या उसे अनुमति देते हैं कि वह बिना किसी प्रकार के विचार के रहे। कब तक?*

प्रभुपाद : *मैंने अपनी बात पूरी नहीं की है। बात पूरी हो जाने पर हम प्रश्नोत्तर का समय देंगे। (लोग झगड़ते रहते हैं।) ठीक है, मुझे प्रसन्नता है कि आप प्रश्न पूछने को उत्सुक हैं, किन्तु प्रतीक्षा कीजिए। थोड़ा धैर्य रखिए, क्योंकि अभी हमारी बात पूरी नहीं हुई है। ज्योंही मैं अपनी बात पूरी कर लेता हूँ, पाँच मिनट में, दस मिनट में, मैं आपके प्रश्नों के उत्तर दूँगा। अधीर मत बनिए। बैठ जाइए। (श्रोता-मंडली शान्त हो जाती है और प्रभुपाद अपना भाषण जारी रखते हैं।)*

पाँच मिनिट के बाद...

प्रभुपाद : *बहुत ठीक। ये महाशय अधीर हो रहे हैं। हम यहीं रुकते हैं। अब बताइए आपका प्रश्न क्या है, महोदय?*

युवक : *व्यावहारिक दृष्टि से हमारी प्रवृत्ति उन चीजों पर बल देने की है जिन्हें हम उसी तथ्य के साथ पहचानते हैं। बहुत से लोग ऐसे होते हैं, जो क्यों और कहाँ जैसे आधिभौतिक सत्य की व्याख्या करते हैं कि मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ।*

प्रभुपाद : *आपका विशेष प्रश्न क्या है?*

युवक : *मेरे पास उस प्रश्न का उत्तर नहीं है। किन्तु मैं प्रयत्न करता हूँ, मैं जीवित हूँ, मैं साँस लेता हूँ।*

प्रभुपाद : हाँ।

युवक : *आप बताइए कि क्यों मेरा सरोकार इस वस्तु से नहीं है। क्या मैं इस क्यों और कहाँ के बारे में जान सकता हूँ।*

प्रभुपाद : *वह ठीक है।*

युवक : *मुझे आपको समझने में कठिनाई है। मुझे अपनी बात कहने में कठिनाई है।*

प्रभुपाद : *जब तक हम इस भौतिक जगत में रहेंगे, तब तक अनेक समस्याएँ बनी रहेंगी।*

युवक : *नहीं, बहुत समस्याएँ नहीं हैं। बहुत समस्याओं की बात नहीं है। यह सबसे बड़ी वास्तविकता है। मेरे पास है... मैं जानता हूँ।*

प्रभुपाद : ठीक।

युवक : *मैं अपने विशेष... के विषय में क्यों और कहाँ भी जानता हूँ।*

प्रभुपाद : ठीक है।

युवक : *मैं यहाँ नहीं आया... किन्तु मुझे अपनी स्थिति स्पष्ट करने दीजिए। यह आवश्यक नहीं... मुझे लगता है कि मैं जरूर... मै सोचता हूँ कि सीखने का अन्तर है... आप उसी नाम से इसे असंख्य बार प्राप्त करेंगे... हो सकता है कि हम व्यक्ति की सत्ता का सामंजस्य खोजने के लिए बहुत समय तक...*

प्रभुपाद (एक लड़के की ओर मुड़ते हुए) : *राय, क्या तुम इनके प्रश्न का उत्तर दे सकते हो? यह एक सामान्य प्रश्न है। तुम इसका उत्तर दे सकते हो, हाँ?*

राय असंबद्ध प्रश्नकर्ता की ओर सहानुभूतिपूर्वक उन्मुख होता है और प्रभुपाद अपनी श्रोता-मण्डली को सम्बोधित करने लगते हैं : "काफी प्रश्न हो गये।" उनका स्वर अब थका हुआ और उदासीन प्रतीत होता है : "अब हम कीर्तन करें।" और लोअर ईस्ट साइड एक बार फिर शान्त हो जाता है। कीर्तन आरम्भ होता है। मंजीरे बजते हैं। प्रभुपाद की सुमधुर वाणी गूँजती है, श्रोता-मंडली उनका अनुसरण करती है। यह आधे घंटे तक चलता

रहता है और तब रुक जाता है।

अब नौ बजे हैं। श्रोता-मंडली स्वामीजी के समक्ष बैठी है। तभी एक लड़का एक सेब, लकड़ी का एक छोटा पात्र और एक चाकू लाता है। अधिकतर श्रोता अभी तक बैठे हैं और देखना चाहते हैं कि कीर्तन का क्या प्रभाव होता है, मानो वह कोई नई नशीली दवा हो। इस बीच प्रभुपाद सेब के दो टुकड़े करते हैं, तब चार, फिर आठ और अन्त में अनेक टुकड़े कर देते हैं। वे स्वयं एक टुकड़ा ले लेते हैं और किसी लड़के को पात्र को सबों के बीच घुमाने को कहते हैं। स्वामीजी अपना सिर पीछे करते हैं और सेब के टुकड़े को, अंगुलियों से होंठ का स्पर्श किये बिना ही सावधानी से मुँह में डाल लेते हैं। होंठ बन्द रखते हुए वे सेब को चबाते हैं और मुँह चलाते हैं।

सभा के सभी सदस्य सेब के छोटे-छोटे टुकड़ों को शान्तिपूर्वक चबाते हैं। प्रभुपाद उठते हैं, जूते पहनते हैं और बगल के दरवाजे से बाहर चले जाते हैं।

• • •

जैसे ही प्रभुपाद अपने कमरे में विश्राम करने चले गये और उनके अतिथि सामने के दरवाजे से नगर को लौट गये, डान और रैफल ने बत्ती बुझा दी, सामने के दरवाजे पर ताला लगा दिया और अपने कम्बल लपेटकर फर्श पर सोने के लिए लेट गये। डान और रैफल ने जब स्वामीजी के स्थान के बारे में सुना, तो उस समय उन्हें रहने के लिए जगह की आवश्यकता थी। प्रभुपाद की यह नीति थी कि यदि किसी लड़के में उनका शिष्य बनने की तनिक भी रुचि हो, तो वह उनके स्टोरफ्रंट को अपना घर बनाकर उसमें रह सकता था। अलबत्ता, प्रभुपाद उनसे किराया और खाने का खर्च देने को कहते। किन्तु यदि डान और रैफेल के समान उनमें से किसी के पास पैसे न होते, तब भी ठीक ही था। शर्त यह थी कि उन्हें अन्य तरीकों से सहायता करनी पड़ती। डान और रैफेल पहले दो लड़के थे, जिन्होंने प्रभुपाद की इस नीति का लाभ उठाया। वे स्वामीजी और कीर्तन की ओर आकृष्ट हुए थे, किन्तु वे उनके दर्शन या भक्तिपूर्ण जीवन के नियमों के बारे में गम्भीर नहीं थे। उनके पास न पैसे थे, न कोई रोजगार। उनके बाल बढ़े हुए और अस्तव्यस्त थे और एक ही कपड़े में वे कई दिनों तक लगातार रहते और सोते थे। प्रभुपाद ने शर्त रखी कि कम-से-कम जितने दिन वे उनके साथ घर में थे, नशीली दवाओं के सेवन, अवैध यौनाचार, मांसाहार, द्यूत-क्रीड़ा आदि से सम्बन्धित उनके नियमों को भंग नहीं करेंगे। वे जानते थे कि उनके साथ रहने वाले ये दोनों लड़के दत्त-चित्त विद्यार्थी नहीं थे, किन्तु उन्होंने उन्हें इस आशा में रहने दिया कि धीरे धीरे वे मन लगाने लगेंगे।

प्राय: कोई न कोई अजनबी यात्री वहाँ यह देखने के लिए रुक जाता कि रात बिताने

के लिए जगह मिल जाये और डान और रैफेल उसका स्वागत करते। एक वृद्ध, सफेद-दाढ़ी वाले भारतीय ने, जो ईसाई हो गया था और विश्व-भ्रमण पर निकला था और जिसके पैर पर पट्टियाँ बंधी थीं, एक बार कई रातें स्टोरफ्रंट के सामने एक लकड़ी की बेंच पर बिताई। कुछ रातें ऐसी भी होतीं जब दस-दस तक की संख्या में आवारे स्टोरफ्रंट में शरण खोजने आते और डान और रैफेल उन्हें यह समझाते हुए प्रवेश दे देते कि स्वामीजी को कोई आपत्ति नहीं होगी बशर्ते कि वे बड़े सवेरे जाग जायें। ऐसे आवारे भी वहाँ ठहरते जिनका मुख्य उद्देश्य मुफ्त भोजन पाना था और सवेरे की कक्षा और अल्पाहार के बाद वे आमतौर से फिर माया के फंदे में चले जाते।

डान और रैफेल स्वामीजी के स्थायी सहवासी थे, यद्यपि वे भी दिन में बाहर चले जाते थे और केवल खाने, सोने और शाम के कीर्तन के लिए लौटते थे। वे कभी कभी स्नान करते थे और तब वे स्वामीजी के घर के स्नानगृह का उपयोग करते थे। कभी कभी वे स्टोरफ्रंट में पूरा दिन बिता देते थे और यदि कोई वहाँ रुककर स्वामीजी की कक्षाओं के बारे में पूछता, तो वे जो कुछ जानते थे (जो अधिक नहीं था) उसे बता देते। वे स्वीकार करते थे कि स्वामीजी का दर्शन उनकी समझ में नहीं आता था और उनके अनुयायी होने का दावा वे नहीं करते थे। यदि कोई स्वामीजी की शिक्षाओं के बारे में जानने का आग्रह करता तो वे सलाह देते, "आप ऊपर जाकर उनसे बात क्यों नहीं करते? स्वामीजी इमारत के पीछे के कमरे में रहते हैं। क्यों नहीं आप वहाँ जाते और उनसे भेंट करते?"

• • •

प्रभुपाद प्रायः अपनी अटारी में रहते थे। कभी कभी वे अपने झरोखे से झाँकते और स्टोरफ्रंट की पिछली खिड़की से देखते कि उनके अलमारी जितने छोटे-से स्नानागार में बत्ती व्यर्थ ही जलती छोड़ दी गई है। वे लड़कों से यह कहने के लिए नीचे आते कि बत्ती बुझा दें और बिजली व्यर्थ न चलने दे, और वहाँ देखते कि कुछ लड़के फर्श पर पड़े बातें कर रहे हैं या पढ़ रहे हैं। प्रभुपाद गम्भीरतापूर्वक वहाँ खड़े हो जाते और उनसे व्यर्थ बत्ती न जलने देने के लिए कहते। वे कृष्ण की ऊर्जा और धन को व्यर्थ जाने देने के चिन्ताजनक विषय पर जोर देते। वे हाथ के कते सूत से हथकर्घे पर बनी मोटी खादी का वस्त्र पहने खड़े रहते ऐसा वस्त्र जो अमरीकनों को विचित्र लगता। प्रभुपाद की धोती और चादर का केसरिया रंग भी विचित्र था। पारम्परिक भारतीय रंग में असमान ढंग से धुंधले रंग में रंगा हुआ उनका परिधान किसी भी पाश्चात्य वस्तु से बिल्कुल भिन्न था। प्रभुपाद के बत्ती बुझा देने के बाद ऐसा लगता कि लड़कों के पास कुछ कहने को या उससे अधिक उपयुक्त कुछ करने को शेष न रह गया हो, अतिरिक्त इसके कि वे देर तक असमंजस के साथ ध्यानपूर्वक

उन्हें देखते रहते। उसके बाद स्वामीजी बिना और कुछ कहे वापस चले जाते।

धन का अभाव था। अपनी सायंकालीन बैठकों से वे सामान्यतः पाँच-छह डालर की रेजगारी और नोट इकट्ठा कर लेते थे। डान न्यू इंगलैंड स्ट्रीट जाकर स्वामीजी के लिए सेब और धन लाने की बात करता। रैफेल कुछ आने वाले धन की बात करता। प्रभुपाद प्रतीक्षा करते रहते और कृष्ण पर निर्भर बने रहते। कभी-कभी वे इमारतों के बीच के मैदान में इस ओर से उस ओर तक घूमा करते। अपना हाथ माला की थैली में गहरे डाले हुए, माला जपते हुए, वे पड़ोसियों को रहस्यमय प्रतीत होते।

अधिकतर वे अपने कमरे में कार्य-मग्न रहते थे। जैसाकि उन्होंने बोवरी पर रहते हुए अपने एक भाषण में कहा था, "मैं यहाँ हमेशा कुछ न कुछ करता रहता हूँ, कभी पढ़ता हूँ, कभी लिखता हूँ।—कुछ न कुछ, पढ़ना या लिखना—यह चौबीस घंटे चलता रहता है।" *श्रीमद्भागवत* का अनुवाद करके उसे चार सौ पृष्ठों के प्रति खंड के हिसाब से साठ खंडों में प्रस्तुत करने का उनका मिशन मात्र उन्हें दिन-रात व्यस्त रख सकता था। जब भी सम्भव होता वे उसी पर कार्य करते रहते; या वे अपने छोटे टाइपराइटर पर जुटे रहते या संस्कृत से अंग्रेजी में अनुवाद करते रहते। वे विशेषकर बहुत सवेरे के समय कार्य करते, जब किसी तरह की बाधा न होती। वे महान् आचार्यों की संस्कृत और बंगाली टीकाओं की छानबीन करते; उनकी व्याख्याओं का अनुसरण करते और उनमें से उद्धरणों का चयन करते हुए वे अपने ज्ञान और अनुभूति के तत्त्व उनमें जोड़ते और इस प्रकार परिश्रमपूर्वक सबको एक में बुनकर अपने भक्तिवेदान्त-तात्पर्यों का टंकन करते। उनके पास अगले खंडों के प्रकाशन के लिए धन का न तो कोई साधन था, न कोई तात्कालिक योजना। किन्तु वे इस विश्वास में कार्य करते जा रहे थे कि किसी-न-किसी तरह उनका प्रकाशन होगा।

उनका मिशन अत्यन्त व्यापक था, *श्रीमद्भागवत* के अनुवाद से भी अधिक व्यापक। इसलिए अपने समय और शक्ति का अधिकतर भाग वे अभ्यागतों से मिलने में लगाते थे। यदि उनका उद्देश्य केवल लिखना होता, तो वे अमेरिका आने का खतरा और कष्ट उठाने की आवश्यकता न होती। अब उनके पास बहुत सारे लोग आने लगे थे और उनके उद्देश्य का एक महत्त्वपूर्ण अंग था उनसे वार्ता करना और कृष्णभावनामृत के विषय में उन्हें आश्वस्त करना। उनके अभ्यागतों में से अधिकतर नवयुवक थे, जो लोअर ईस्ट साइड में रहने के लिए हाल ही में आये थे। अभ्यागतों की बातचीत करने के लिए उनका कोई सचिव नहीं था, न ही आने वालों से मिलने का उनका समय निश्चित था। बहुत सवेरे से रात के दस बजे तक जब भी कोई आ जाता, तो प्रभुपाद अपना टाइप का या अनुवाद का काम बन्द कर देते और उससे बात करने लगते। उनका पड़ोस खुला था और बहुत-से

अभ्यागत सड़क से सीधे उनके यहाँ आ जाते। कुछ तो गम्भीर होते, पर बहुत-से ऐसे न होते। कुछ तो नशे में धुत होते। प्रायः वे विनम्र भाव से जिज्ञासु नहीं बनते, वरन् चुनौती देने आते।

एक बार एक हिप्पी, जिसने बहुत मात्रा में एल.एस.डी. चढ़ा रखा था, ऊपर अटारी में चढ़ आया और स्वामीजी के समक्ष बैठ गया : "अभी, इस समय मैं आप से अधिक ऊँचाई पर हूँ।" उसने घोषणा की। "मैं ईश्वर हूँ।" प्रभुपाद ने हाथ जोड़ते हुए किंचित् अपना सिर झुका लिया, "कृपया मेरा प्रणाम स्वीकार करें।" उन्होंने कहा। तब उन्होंने "ईश्वर" से चले जाने को कहा। अन्य लोगों ने स्पष्ट स्वीकार किया कि वे सनक गये हैं अथवा प्रेताविष्ट हैं और अपने मानसिक क्लेशों से मुक्ति चाहते हैं।

लोन सोलोमन : *मैं आध्यात्मिक केन्द्रों की खोज में था,—ऐसे स्थान जहाँ कोई जा सकता हो, ऐसे स्थानों की नहीं, जो स्टोर की तरह हों, जहाँ उन्हें चले जाने को कहा जाता हो, वरन् ऐसे स्थानों की जहाँ आप लोगों से वास्तव में बात कर सकें और यह समझने का प्रयत्न कर सकें कि चरम सत्य क्या है। मैं स्वामीजी के स्थान पर जाता, यह जानते हुए कि वह निश्चय ही एक आध्यात्मिक केन्द्र है। वहाँ निश्चय ही कोई चीज थी। मैं नशीली दवाओं के सेवन का अभ्यस्त हो गया था और इस धारणा से क्षुब्ध था कि मैं जरूर ईश्वर हूँ या अपनी वास्तविक स्थिति से कई गुना ऊपर कोई बहुत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हूँ। वास्तव में मैं बहुत दुखी था और इस भारी दुख के कारण मानसिक दृष्टि से विक्षिप्त हो गया था और जब भी मेरा मन करता, मैं उनसे मिलने के लिए बेधड़क चला जाता। उनकी बैठकों में जाना मेरे लिए निश्चित नहीं था, किन्तु उनसे मिलने मैं बार-बार जाता। एक बार मैं उनके पास आया और मैंने रात वहीं बिताई। स्टोरफ्रंट में सोने के लिए मेरा सदैव स्वागत होता। मैं स्वामीजी को दिखाना चाहता था कि मेरी स्थिति कितनी दयनीय है, जिससे वे मेरे लिए निश्चित रूप से कुछ करें। उन्होंने कहा कि मैं उनके साथ मिल जाऊँ और तब वे मेरी समस्याओं का समाधान खोज सकेंगे। पर मैं इसके लिए तैयार नहीं था।*

वस्तुतः यौनाचार में डूबा था और मैं जानना चाहता था कि अवैध यौनाचार से उनका क्या आशय था, उनकी क्या परिभाषा थी। उन्होंने मुझसे कहा, "वैवाहिक सम्बन्ध के बाहर यौनाचार अवैध यौनाचार है।" किन्तु मैं उनके उत्तर से सन्तुष्ट नहीं हुआ और मैंने और अधिक विस्तार की माँग की। उन्होंने कहा कि जो उत्तर उन्होंने दिया था, उस पर पहले मैं विचार करूँ और अगले दिन उनके पास फिर जाऊँ तो वे अधिक विस्तार करेंगे।

मैं उनके पास एक लड़की के साथ गया। स्वामीजी द्वार पर आये और बोले, "मैं बहुत व्यस्त हूँ, मेरे पास काम है, अनुवाद का काम है। मैं इस समय तुमसे बात नहीं कर सकता।" तो, केवल वही अवसर था, जबकि उन्होंने मेरा पूरा आतिथ्य-सत्कार नहीं

किया, मुझ पर ध्यान नहीं दिया और मेरे सारे प्रश्नों के उत्तर नहीं दिये। इसलिए मैं उस लड़की के साथ वहाँ से तुरन्त चला गया। उनका यह समझना सही था कि मैं केवल उस लड़की को प्रभावित करने के लिए उनसे मिलने गया था। वे बिल्कुल समझ गये और मेरे इस प्रकार के साहचर्य को उन्होंने अस्वीकार कर दिया। किन्तु जब भी में उनके पास मैं जाता और वे हमेशा मेरी सहायता करते।

कभी-कभी विद्वत्ता का दम भरने वाले नवयुवक स्वामीजी के *भगवद्‌गीता* विषयक ज्ञान की परीक्षा करने आते थे। "आपने *भगवद्‌गीता* पढ़ी है," प्रभुपाद कहते, "तो आपका क्या निष्कर्ष है? यदि आप *गीता* को जानने का दावा करते हैं, तो आपको कृष्ण द्वारा प्रस्तुत निष्कर्ष का ज्ञान होना चाहिए।" किन्तु अधिकतर लोगों का यह विचार नहीं था कि *गीता* का कोई निश्चित निष्कर्ष है। और यदि कोई निष्कर्ष होता भी, तो इसका तात्पर्य यह नहीं था कि लोग अपने जीवन को उस निष्कर्ष के अनुसार ढालें। *गीता* एक आध्यात्मिक पुस्तक थी और किसी को उसका अनुसरण करने की जरूरत नहीं थी।

एक नवयुवक स्वामीजी के पास यह प्रश्न लेकर आया, "अगले सप्ताह से आप किस पुस्तक से व्याख्यान देंगे? क्या आप *तिब्बतन बुक आफ द डेड* को पढ़ाएँगे?" मानो प्रभुपाद आध्यात्मिकता की शिक्षा विश्व-धर्म के विद्यालयी सर्वेक्षण पाठ्यक्रम के रूप में देने वाले हों। प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "*भगवद्‌गीता* में हर वस्तु प्राप्य है। हम उसके एक श्लोक का अध्ययन तीन महीनों तक कर सकते हैं।"

और अन्य प्रश्न भी पूछे गये : "कैमस के बारे में आपका क्या कहना है?"

"कैमस का दर्शन क्या है?" प्रभुपाद ने पूछा।

"उसका कहना है कि हर वस्तु असंगत है और दार्शनिक प्रश्न केवल यही है कि क्या आत्महत्या करनी चाहिए या नहीं।"

"इसका तात्पर्य यह है कि हर वस्तु *उसके* लिए असंगत है। भौतिक जगत असंगत है। किन्तु उसके आगे आध्यात्मिक लोक है। इसका आशय यह है कि वह आत्मा को नहीं जानता। आत्मा का वध नहीं हो सकता।"

विभिन्न विचारकों के अनुयायी उनके पास आते। "नित्शे के बारे में आप क्या कहते हैं? काफ्का? टिमोथी लेयरी? बाब डाइलन?" प्रभुपाद पूछते कि उनके दार्शनिक सिद्धान्त क्या हैं और प्रत्येक अनुयायी को अपने विशेष बौद्धिक नायक के पक्ष की व्याख्या करके उसका समर्थन करना पड़ता।

"वे सभी दिमागी अटकलबाजी करने वाले हैं," प्रभुपाद कहते, "इस भौतिक जगत में हम सभी बद्ध आत्माएँ हैं। आपका ज्ञान अधूरा है। आप की इन्द्रियाँ कुंठित है। आपके *मत* का क्या मूल्य है? हमें परिपूर्ण अधिकारी, कृष्ण से जानना है।"

"क्या आपके कहने का तात्पर्य यह है कि इन महान् विचारकों में से कोई भी भागवत्-चेतना से युक्त नहीं है?" एक लड़के ने पूछा।

"उनकी निष्कपटता ही उनकी भगवत्-चेतना है। किन्तु यदि हम ईश्वर का पूर्ण ज्ञान चाहते हैं, तो हमें शास्त्र का अनुगमन करना चाहिए।"

चुनौतियाँ प्रायः सामने आतीं। किन्तु स्वामीजी के ओजपूर्ण और कठोर तर्क के सामने चुनौती देने वाला धीरे-धीरे विचारपूर्ण मौन में डूब जाता था।

"क्या चीन का आध्यात्मिक ज्ञान आगे बढ़ा हुआ है?"

प्रभुपाद कभी कभी प्रश्नों का उत्तर अपने चेहरे को केवल कर्कश बनाकर देते थे।

"मैं तो स्वयं वेदान्त का अनुयायी हूँ।"

"क्या आप जानते हैं कि *वेदान्त* का अर्थ क्या है? वेदान्त का पहला सूत्र क्या है? क्या आप जानते हैं?"

"नहीं मैं..."

"तब आप वेदान्त के बारे में बात कैसे कर सकते हैं? *वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः*—कृष्ण कहते हैं कि वेदान्त का लक्ष्य वे ही हैं। इसलिए यदि आप वेदान्ती हैं, तो आपका कृष्णभावनाभावित होना जरूरी है।"

"बुद्ध के विषय में आप क्या कहते हैं?"

"क्या आप उनके अनुयायी हैं?"

"नहीं।"

"नहीं, आप केवल बात करते हैं? आप अनुसरण क्यों नहीं करते? कृष्ण के अनुयायी बनें, ईसा मसीह के अनुयायी बनें, बुद्ध के अनुयायी बनें, किन्तु केवल बात करके न रह जायें।"

"यह तो ईसाई मत जैसा ही लगता है। यह उससे भिन्न कैसे है?"

"यह वही है: भगवत्-प्रेम। किन्तु ईसाई किसे कहते हैं? अनुयायी कौन है? बाइबिल शिक्षा देती है, "तू किसी का वध नहीं करेगा" किन्तु सारे संसार में ईसाई वध करने में निपुण हैं। क्या आप यह बात जानते हैं? मैं समझता हूँ कि ईसाई कहते हैं कि ईसा-मसीह ने हमारे पापों के लिए अपने प्राणों का त्याग किया—तो आप अब भी पाप क्यों कर रहे हैं?"

प्रभुपाद अमेरिका के लिए अजनबी थे, तो अमेरिकावासी परम पूर्ण के विषय में अजनबी थे। जब भी कोई उनसे मिलने आता, तो वे समय नष्ट न करते; वे दर्शन, प्रज्ञा और तर्क की बात करते। वे अनीश्वरवाद और निराकारवाद के विरुद्ध निरन्तर तर्क करते। वे ईश्वर के अस्तित्व और कृष्णभावनामृत की सर्वभौमिकता को सिद्ध करने के लिए

बलपूर्वक बोलते। सभी प्रकार के प्रश्नों और दार्शनिक विचारों का सामना करते हुए वे दिन-रात उत्साहपूर्ण ढंग से वार्ता में लगे रहते।

वे दूसरों की सुनते भी थे और उन्होंने स्थानीय लोगों के विस्तृत तर्क-वितर्क सुने। युद्ध और अमरीकी समाज के प्रति अमेरिका के नवयुवकों के असंतोष के विषय में उन्हें सुनने को मिलता रहता। एक दिन एक लड़के ने उनसे कहा कि वह विवाह इसलिए नहीं करना चाहता था, क्योंकि उसे कोई विशुद्ध लड़की नहीं मिल रही थी; इससे अच्छा होगा कि वह वेश्याओं से काम चलाए। एक दूसरे ने उन्हें विश्वास में लेते हुए बताया कि उसकी माँ की योजना गर्भपात कराकर उसे मार डालने की थी, किन्तु अन्तिम क्षणों में उसकी दादी ने उसकी माँ को ऐसा न करने के लिए राजी कर लिया। वे समलिंगी कामी लोगों की भी बातें सुनते रहते। किसी ने उन्हें बताया कि न्यूयार्क में एक ऐसा भी समुदाय था, जो गर्भपात से प्राप्त भ्रूणों का मांस खाने का शौकीन था। और ऐसे हर मामले में प्रभुपाद सही स्थिति बताते।

वे मार्क्सवादियों से बात करते और समझाते कि यद्यपि मार्क्स कहता था कि सारी सम्पत्ति राज्य की है, पर वास्तविकता यह है कि हर वस्तु ईश्वर की है। केवल 'आध्यात्मिक साम्यवाद' ही, जो ईश्वर को केन्द्र में रखकर चलता है, वास्तव में सफल हो सकता है। वे एल.एस.डी. सेवन से प्राप्त झलकों को दृष्टि-भ्रम बताकर उनकी निंदा करते और बताते कि ईश्वर को वस्तुतः कैसे देखे जा सकते हैं और ईश्वर का स्वरूप कैसा है।

यद्यपि केवल एक ही बार आने वाले ऐसे कितने ही अभ्यागत आये और चले गये, पर कुछ ऐसे मित्र भी आये, जो यह देखने के लिए रुकने लगे कि स्वामीजी अपने अतिथियों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं। वे स्वामीजी के तर्कों की, लोगों के प्रति उनकी चिन्ता की और कृष्ण के प्रति उनके समर्पण की सराहना करने लगे। ऐसा लगता था कि स्वामीजी सचमुच जानते थे कि लोगों की सहायता कैसे की जाये और वे लोगों की समस्याओं के समाधान के रूप में निरपवाद रूप से कृष्णभावनामृत का मार्ग बताते—जहाँ तक लोग उस पर चल सकें। कुछ लोग स्वामीजी के सन्देश को हृदय से ग्रहण करने लगे।

• • •

"हम अपनी सोसाइटी को इस्कान के नाम से पुकारेंगे," प्रभुपाद विनोदपूर्ण भाव से हँस पड़े थे, जब उन्होंने पहले-पहल यह नाम गढ़ा था।

बोवरी पर रहते हुए ही उन्होंने अपनी सोसाइटी के संस्थापन के सम्बन्ध में कानूनी कार्यवाही आरम्भ कर दी थी। किन्तु कानूनी कार्यवाही आरम्भ करने के पूर्व भी वे अपने "इंटरनेशनल सोसाइटी फार कृष्ण कान्शियसनेस" (अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ) के

विषय में बातें करते रहते थे और इस तरह यह नाम भारत को लिखे गये पत्रों में और *विलेज वायस* पत्रिका में प्रकट हो चुका था। एक मित्र ने एक ऐसा नाम सुझाया था, जो पश्चिम के लोगों के लिए अधिक परिचित लगता, वह नाम था "इंटरनेशनल सोसाइटी फार *गॉड* कान्शियसनेस।" किन्तु प्रभुपाद का आग्रह "*कृष्ण* कान्शियसनेस" पर था। "गाड" (ईश्वर) नाम अस्पष्ट था, जबकि "कृष्ण" यथार्थ और वैज्ञानिक था। "गाड कान्शियसनेस" (ईश्वर भावनामृत) आध्यात्मिक दृष्टि से कमजोर और कम वैयक्तिक था। और यदि पाश्चात्य लोग नहीं जानते थे कि कृष्ण ही ईश्वर हैं, तो अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ "हर कस्बे हर गाँव" में उनकी महिमा को फैलाकर उन्हें बताएगा।

"कृष्ण कान्शियसनेस" (कृष्णभावनामृत) शब्द भक्तिवेदान्त स्वामी का सोलहवीं शताब्दी में रचित श्रील रूप गोस्वामी की *पद्यावली* के एक वाक्यांश *कृष्ण-भक्ति-रस-भावित* का अपना रूपान्तर था जिसका अर्थ है, "कृष्ण की भक्ति सम्पन्न करने के मधुर रस में निमग्न रहना।"

किन्तु इस्कान को एक लाभ न कमाने वाले कर-मुक्त धर्म के रूप में विधिवत् पंजीयन के लिए धन और एक वकील की आवश्यकता थी। कार्ल इयरजेंस ने धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक कल्याणकारी संगठनों के निर्माण का कुछ अनुभव प्राप्त कर लिया था और जब वह बोवरी में प्रभुपाद से मिला था, तो उनकी सहायता करने को वह राजी हो गया था। उसने अपने वकील स्टीफेन गोल्डस्मिथ से सम्पर्क कर लिया था।

स्टीफेन गोल्डस्मिथ, जो एक यहूदी नवयुवक वकील था और जिसके पत्नी और दो बच्चे थे तथा पार्क एवन्यू में जिसका कार्यालय था, आध्यात्मिक आन्दोलनों में रुचि रखता था। जब कार्ल ने उसे प्रभुपाद की योजनाओं के बारे में बताया, तो वह तत्काल एक भारतीय स्वामी के लिए एक धार्मिक संस्था स्थापित करने के विचार से आकर्षित हुआ। वह २६ सेकंड एवन्यू में प्रभुपाद से मिला और दोनों ने संस्था-संस्थापन, कर-मुक्ति, प्रभुपाद की आप्रवासन-स्थिति और कृष्णभावनामृत के विषय में विचार-विनिमय किया। गोल्डस्मिथ प्रभुपाद से कई बार मिला। एक बार वह अपने बच्चों को साथ लाया, जिन्हें स्वामीजी द्वारा तैयार किया हुआ 'सूप' (झोल) बहुत पसन्द आया। वह उनकी शाम की कक्षाओं में आने लगा, जहाँ वह श्रोता-मण्डली में प्रायः अकेला गैर-हिप्पी सदस्य होता था। एक शाम को सारी कानूनी कार्यवाही पूरी कर लेने और पंजीकरण की प्रक्रिया के लिए तैयार होकर गोल्डस्मिथ नई सोसाइटी के न्यासियों के हस्ताक्षर प्राप्त करने के लिए प्रभुपाद के व्याख्यान और कीर्तन में आया।

• • •

जुलाई ११

प्रभुपाद व्याख्यान दे रहे हैं।

गोल्डस्मिथ पतलून, कमीज और टाई पहने हुए दरवाजे के निकट फर्श पर बैठा हुआ, पड़ोस में हो रहे और विचलित करने वाले शोर के बावजुद ध्यानपूर्वक व्याख्यान सुन रहा है। प्रभुपाद समझ रहे हैं कि विद्वान लोग किस तरह *भगवद्गीता* की अभक्तिपूर्ण व्याख्याओं द्वारा अबोध जनता को बहकाया करते हैं और अब वकील की सम्मान्य उपस्थिति के स्वीकृति-स्वरूप और मानो गोल्डस्मिथ का ध्यान और अच्छी तरह आकृष्ट करने हेतु, वे व्याख्यान के विषय के मध्य उसका परिचय प्रस्तुत करते हैं।

मैं आपको एक जीता-जागता उदाहरण दूँगा कि चीजों की गलत व्याख्या किस तरह की जाती है, ठीक उसी तरह जैसे हमारे अध्यक्ष श्रीमान् गोल्डस्मिथ जानते हैं कि दक्ष वकील अपनी व्याख्याओं द्वारा किस तरह कई चीजें कर सकते हैं। जब मैं कलकत्ता में था, तो सरकार ने किराया टैक्स सम्बन्धी एक कानून बनाया और एक दक्ष वकील ने अपनी व्याख्या द्वारा उसका पूरा अर्थ ही बदल दिया। सरकार को फिर से नया कानून बनाना पड़ा, क्योंकि इस वकील की व्याख्या द्वारा सरकार के आशय पर पानी फिर गया था। अतः हम यहाँ कृष्ण के उद्देश्य को, जिसके लिए गीता का निर्माण हुआ था, नष्ट करने के लिए नहीं इकट्ठे हुए हैं। लेकिन अनधिकृत व्यक्ति, कृष्ण के उद्देश्य को विफल करने में लगे हैं, अतः यह अनधिकृत है।

अच्छा, श्रीमान् गोल्डस्मिथ, आप कोई भी प्रश्न पूछ सकते हैं।

श्री गोल्डस्मिथ खड़े होते हैं और वहाँ एकत्रित लोगों को आश्चर्यचकित करते हुए एक संक्षिप्त घोषणा करते हैं, जिसमें स्वामीजी के नये धार्मिक आन्दोलन के पंजीकरण के दस्तावेज पर हस्ताक्षरकर्ताओं की माँग करते हैं।

प्रभुपाद : *वे यहाँ उपस्थित हैं। आप उनके पते अभी ले सकते हैं।*

श्री गोल्डस्मिथ : *मैं अभी ले सकता हूँ, हाँ।*

प्रभुपाद : *हाँ, आप ले सकते हैं। बिल, तुम अपना पता दे सकते हो। और रैफेल, तुम अपना दे सकते हो। और डान... राय... श्रीमान् ग्रीन।*

बैठक ज्योंही समाप्त होती है, न्यासियों के रूप में हस्ताक्षर के लिए जिनके नाम पुकारे गये थे वे उस छोटे स्टोरफ्रंट के सामने आकर खड़े हो जाते हैं और वकील ने अपनी पतली-सी अटैची से जो पन्ने निकाले हैं, उनको सरसरी निगाह से देखने और यथानिर्देश उन पर हस्ताक्षर करने के लिए प्रतीक्षा करते है। फिर भी उनमें से एक भी व्यक्ति कृष्णभावनामृत के प्रति प्रतिबद्ध नहीं था।

श्रीमान् गोल्डस्मिथ को यथावश्यक संख्या में हस्ताक्षरकर्ता मिल जाते हैं—वे थोड़े-

से ऐसे लोग हैं, जो स्वामीजी से सहानुभूति रखते हैं और उनकी सहायता के लिए जिनके मन में पर्याप्त सम्मान है। सर्वप्रथम न्यासी, जो "संघ का अगला वार्षिक अधिवेशन होने तक" एक वर्ष के लिए पदाधिकारी रहेंगे, माइकल ग्रांट, (जो दस्तावेज पढ़े बिना ही अपने हस्ताक्षर कर देता है और पता लिख देता है) माइक की महिला मित्र जेन और जेम्स ग्रीन हैं। इनमें से किसी का भी इरादा धार्मिक संघ के ट्रस्टी के रूप में किसी भी औपचारिक दायित्व को गम्भीरतापूर्वक हाथ में लेना नहीं है। किन्तु स्वामीजी के प्रगतिशील संघ को कानूनी अस्तित्व में लाने के लिए अपने हस्ताक्षर से उनकी सहायता करने में उन्हें प्रसन्नता है।

कानून के अनुसार न्यासियों का एक दूसरा दल दूसरे साल के लिए कार्य-भार संभालेगा। वे हैं —पाल गार्डीनर, राय और डान। तीसरे वर्ष के न्यासी हैं—कार्ल इयरजेन्स, बिल एप्सटीन और रैफेल।

उनमें से कोई भी ठीक-ठाक नहीं जानता था कि आधे-दर्जन, कानूनी-आकार में टंकित पृष्ठों का आशय क्या है, सिवाय इसके कि "स्वामीजी एक सोसाइटी बना रहे हैं।"

क्यों?

कर से छूट के लिए, यदि कोई बड़ी धनराशि अनुदान में दे और अन्य लाभों के लिए, जो एक पंजीकृत धार्मिक सोसाइटी प्राप्त कर सके।

किन्तु वर्तमान परिस्थिति में ये उद्देश्य न तो बहुत महत्त्वपूर्ण हैं और न प्रासंगिक। अनुदान कौन देगा? कदाचित् श्रीमान् गोल्डस्मिथ जिन के अतिरिक्त किसके पास इतना धन है?

किन्तु प्रभुपाद अपनी योजना भविष्य के लिए बना रहे हैं और उनकी योजना कर में छूट से कहीं अधिक के लिए है। वे अपने आध्यात्मिक पूर्वजों की सेवा करने और शास्त्रों की उस भविष्यवाणी को पूरा करने का प्रयत्न कर रहे हैं कि एक आध्यात्मिक आन्दोलन कलियुग में दस हजार वर्षों तक फलता-फूलता रहेगा। अत्यन्त विस्तार वाले कलियुग में (जो ४,३२,००० वर्षों तक रहेगा) १९६० ई. का दशक एक क्षुद्र क्षण के समान है।

वेदों में वर्णन है कि विश्व का कालचक्र चार युगों में संचरण करता है और कलियुग सबसे निकृष्ट समय है; इसमें मनुष्यों के सभी आध्यात्मिक गुणों में ह्रास होता जाता है, जब तक कि मानवता सभी मानवीय सदाचारों से वंचित होकर अन्ततः पशुता की सभ्यता की कोटि में नहीं पहुँच जाती। परन्तु वैदिक साहित्य आध्यात्मिक जीवन के एक स्वर्ण-युग की भविष्यवाणी करता है, जो चैतन्य महाप्रभु के आविर्भाव से आरम्भ होकर दस हजार वर्षों तक रहेगा; यह ऐसा काल-प्रवाह होगा, जो कलियुग की धारा के विपरीत बहेगा, फिर भी एक ऐसी दृष्टि लिए हुए जो कल्पान्त और उसके परे तक पहुँचती है, अपने दो

पैर सेकंड एवन्यू की धरती पर दृढ़ता से जमाए हुए प्रभुपाद ने अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ का समारंभ कर दिया है। उनके ऊपर बहुत-से व्यावहारिक उत्तरदायित्व हैं : किराये का भुगतान, अपने संघ का पंजीयन, प्रगतिशील विश्वव्यापी भक्त-मण्डली का मार्ग प्रशस्त करना, इत्यादि। तो भी वे नहीं मानते कि उनके लघु शुभारम्भ से उनके दिव्य उद्देश्य का महत्तर क्षेत्र किसी तरह सीमित है। वे जानते हैं कि सब कुछ कृष्ण पर अवलम्बित है, इसलिए वे सफल होते हैं या विफल, यह परमेश्वर पर निर्भर है। उन्हें केवल प्रयत्न करना है।

• • •

इस्कान के पंजीकरण की धाराओं में जो उद्देश्य उल्लिखित हैं, वे प्रभुपाद की विचारधारा को उद्घाटित करते हैं। इसके सात बिन्दु हैं, जो उन बिन्दुओं के समान हैं, जो १९५३ ई. में झांसी (भारत) में गठित लीग आफ डिवोटीज की नियमावली में दिए गये थे। वह प्रयास विफल रहा था, फिर भी उनके उद्देश्य अपरिवर्तित बने रहे।

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के सात उद्देश्य :

(क) सम्पूर्ण मानव समाज में सुव्यवस्थित रूप में आध्यात्मिक ज्ञान का प्रसार करना और सभी मनुष्यों को आध्यात्मिक जीवन की प्रक्रिया में प्रशिक्षित करना, जिससे जीवन-मूल्यों में असंतुलन रोका जा सके और विश्व में वास्तविक एकता और शान्ति की स्थापना हो सके।

(ख) कृष्णभावना का प्रसार करना, जैसाकि *भगवद्गीता* और *श्रीमद्भागवत* में उद्घाटित है।

(ग) संघ के सदस्यों को एक-दूसरे से जोड़ना और उन्हें आदि सत्ता कृष्ण के निकटतर ले जाना और इस प्रकार सदस्यों और सम्पूर्ण मानवता में इस धारणा का विकास करना कि प्रत्येक जीवात्मा परमेश्वर (कृष्ण) के गुणों का अंश है।

(घ) भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु की शिक्षाओं में उद्घाटित संकीर्तन-आन्दोलन या भगवान् के पावन नाम के सामूहिक गायन की शिक्षा देना और उसे प्रोत्साहित करना।

(ङ) सदस्यों और सम्पूर्ण मानव समाज के लिए श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व को समर्पित दिव्य लीलाओं के पवित्र धाम का निर्माण करना।

(च) सरलतर और अधिक सहज जीवन की शिक्षा देने के उद्देश्य से सदस्यों को एक-दूसरे के अधिक निकट लाना।

(छ) उपर्युक्त उद्देश्यों की सिद्धि को दृष्टि में रखते हुए पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों तथा अन्य रचनाओं का प्रकाशन और वितरण करना।

• • •

इस्कान के अधिकृत सदस्यों ने संघ के उद्देश्यों के सम्बन्ध में जो भी सोचा हो, उस की परवाह न करते हुए प्रभुपाद ने उन्हें तात्कालिक यथार्थताओं के रूप में देखा। जैसाकि श्री रुबेन ने लिखा था, जो एक उपमार्ग कंडक्टर थे और १९६५ ई. में प्रभुपाद से मैनहट्टन के पार्क में एक बेंच पर मिले थे, "वे यह जानते प्रतीत होते थे कि उनके पास अनेकानेक मन्दिर होंगे, जो भक्तों से भरे होंगे। 'मन्दिर और ग्रंथ अनेक हैं,' उन्होंने कहा, 'उनका अस्तित्व है, वे विद्यमान हैं, किन्तु समय हमें उनसे अलग रख रहा है।' "

चार्टर में उल्लिखित पहला उद्देश्य प्रचार था। 'प्रचार' एक ऐसा शब्द था, जिसका उपयोग प्रभुपाद बार-बार करते थे। उनके लिए प्रचार शब्द का महत्त्व केवल धर्मोपदेश से कहीं अधिक विस्तृत था। प्रचार का अर्थ था परमेश्वर के नाम पर भव्य, निस्वार्थपूर्ण साहसी अभियान। चैतन्य महाप्रभु ने समस्त दक्षिण भारत में घूमकर प्रचार किया था और उन्होंने हजारों लोगों को अपने साथ भावातिरेक में संकीर्तन और नृत्य के लिए प्रेरित किया था। भगवान् कृष्ण ने कुरुक्षेत्र के युद्ध-क्षेत्र में अर्जुन के साथ रथ में खड़े होकर *भगवद्गीता* का उपदेश दिया था। भगवान् बुद्ध ने प्रचार किया था; ईसा मसीह ने प्रचार किया था और सभी विशुद्ध भक्त प्रचार करते हैं।

इस्कान के प्रचार से उस वस्तु की उपलब्धि होगी, जिसे लीग ऑफ नेशन्स तथा यूनाइटेड नेशन्स जैसी संस्थाएँ नहीं प्राप्त कर सकी हैं—अर्थात् "विश्व में वास्तविक एकता और शान्ति।" इस्कान के कार्यकर्ता इस संसार में शान्ति की स्थापना करेंगे, जो भौतिकता और कलह से घोर रूप में पीड़ित है। वे "व्यवस्थित रूप में आध्यात्मिक ज्ञान" का, सम्प्रदाय-निरपेक्ष भगवद्-विज्ञान के ज्ञान का प्रचार करेंगे। ऐसा नहीं था कि जुलाई १९६६ ई. में एक नये धर्म का जन्म हो रहा था, बल्कि भगवान् के शाश्वत प्रचार के पौधे को, जो संकीर्तन नाम से विख्यात है, पूर्व से पश्चिम में प्रतिरोपित किया जा रहा था।

संच के सदस्य इकट्ठे होंगे और *भगवद्गीता* तथा *श्रीमद्भागवत* की शिक्षाओं को सुनकर एवं हरे कृष्ण मंत्र का कीर्तन करके, उन्हें अनुभूति होगी कि उनमें से प्रत्येक चेतन जीवात्मा था, जो परमेश्वर कृष्ण से शाश्वत रूप से सम्बन्धित था। तब वे इसका प्रचार "समस्त मानव-समाज" में करेंगे, विशेषकर भगवान् के पावन नाम के संकीर्तन के माध्यम से।

इस्कान "श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व को समर्पित दिव्य लीलाओं के एक पवित्र धाम" का भी निर्माण करेगा। क्या यह स्टोरफ्रंट से परे की बात थी? हाँ, निस्सन्देह, प्रभुपाद कभी कोई छोटी बात नहीं सोचते थे : "वे यह जानते प्रतीत होते थे कि वे भक्तों से भरे मन्दिरों का निर्माण करेंगे।"

वे चाहते थे कि इस्कान "एक सरल और अधिक सहज जीवन-पद्धति का प्रदर्शन करे।" प्रभुपाद के विचार में भारत के गाँवों का जीवन था, जहाँ लोग ठीक वैसा ही जीवन बिताते थे, जैसा कृष्ण ने बिताया था। ऐसी जीवन-पद्धति कृष्णभावनामृत के विकास के सर्वथा अनुकूल थी।

और इन सभी छह उद्देश्यों की पूर्ति सातवें उद्देश्य से होगी : इस्कान साहित्य प्रकाशित करेगा और उसका वितरण करेगा। यह एक विशेष आदेश था, जो श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने श्रील प्रभुपाद को दिया था। उन्होंने १९३२ ई. में वृन्दावन में राधा-कुण्ड पर एक दिन उनसे विशेष रूप से कहा था, "यदि तुम्हें कभी भी कोई धन मिले, तो उससे पुस्तकें प्रकाशित करना।"

निश्चय ही हस्ताक्षरकर्ताओं में से किसी को भी स्वामीजी के स्वप्नों का तात्कालिक स्वरूप स्पष्ट नहीं था; तो भी ये सातों उद्देश्य न्यूयार्क के कतिपय सरकारी अधिकारियों को आश्वस्त करने के लिए आस्तिकतापूर्ण काव्योक्तियों की अवतारणा मात्र नहीं थे। प्रभुपाद चार्टर की प्रत्येक धारा को कार्य रूप में परिणत करना चाहते थे।

निस्सन्देह इस समय वे नितान्त सीमित परिस्थितियों में कार्य कर रहे थे। "पूजा का मुख्य स्थान, जो २६ सेकंड एवन्यू, न्यूयार्क के प्रदेश, जिले और नगर में स्थित था," अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ का एकमात्र मुख्यालय था। फिर भी प्रभुपाद इस बात पर बल देकर कहते कि वे २६ सेकंड एवन्यू में नहीं रह रहे हैं। उनकी दृष्टि लोकातीत थी। उनके गुरु महाराज आध्यात्मिक ध्यान के परम्परागत पवित्र स्थानों से निकलकर कलकत्ता, बम्बई और दिल्ली जैसे स्थानों में प्रचार करने गये थे। तब भी प्रभुपाद कहते थे कि उनके गुरु महाराज इन नगरों में से किसी में कभी नहीं रहते थे, वरन् उनका निवास सदैव वैकुण्ठ में, अर्थात् आध्यात्मिक लोक में था, क्योंकि वे सदा भक्ति में लीन रहते थे।

उसी तरह २६ सेकंड एवन्यू-स्थित पूजा-स्थल, न्यूयार्क का एक स्टोरफ्रंट नहीं था,

जो कभी कौतुहलपूर्ण वस्तुओं की दुकान रह चुका था। उस स्टोरफ्रंट और उस प्रकोष्ठ का अध्यात्मीकरण हो चुका था और अब वे लोकातीत स्वर्ग थे। "समग्र मानव समाज" वहाँ आ सकता था और जाति अथवा धर्म के भेद-भाव बिना पूरा संसार वहाँ शरण पा सकता था। यद्यपि वह बहुत सादा, छोटा और विपन्न था, किन्तु प्रभुपाद की दृष्टि में वह "कृष्ण के व्यक्तित्व को समर्पित दिव्य लीलाओं का पवित्र धाम था" वह विश्व का मुख्यालय था, प्रकाशन-गृह था, पवित्र तीर्थ-स्थल था और ऐसा केन्द्र था, जहाँ से भक्तों की सेना निकलकर संसार की सभी सड़कों में भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन करेगी। समस्त ब्रह्माण्ड अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ से, जो यहाँ स्थापित हो रहा था, कृष्णभावनामृत प्राप्त कर सकेगा।

• • •

कीथ के रूप में प्रभुपाद को एक निष्ठावान् अनुयायी मिला था। दोनों की भेंट होने के एक सप्ताह के अन्दर कीथ, माट स्ट्रीट के प्रकोष्ठ से निकलकर, प्रभुपाद के साथ रहने को आ गया था। वह अब भी चीथड़ों जैसी डेनिम की पैंट और टी-शर्ट पहनता था, पर वह स्वामीजी के लिए सौदे खरीदने और खाना बनाने का सारा काम करने लगा था। भारत में रहते हुए कीथ धार्मिक पुरुषों के प्रति श्रद्धा-प्रदर्शन और शिष्यता के अनुशासन के कुछ नियम सीख चुका था। स्वामीजी के प्रति उसके अर्पण को उसके मित्र उत्सुकतापूर्वक देखा करते थे।

कीथ : *मैंने देखा कि वे भोजन बना रहे हैं, तो मैंने पूछा कि क्या मैं आप की सहायता कर सकता हूँ। वे मेरे इस प्रस्ताव से बहुत प्रसन्न हुए। पहले एक-दो बार वे मुझे अपने साथ बाजार ले गये; उसके बाद मैं प्रायः स्वयं ही अकेले जाने लगा। उन्होंने मुझे दिखाया कि बिना बेलन के ही केवल अंगुलियों से गूदे आटे को फैलाकर चपातियाँ कैसे बनाई जा सकती हैं। हम प्रतिदिन चपातियाँ, भात, दाल और सब्जियां बनाते थे।*

इस तरह कीथ प्रभुपाद के घर में एक भरोसेमंद रसोइया और व्यवस्थापक बन गया। इस बीच माट स्ट्रीट के प्रकोष्ठ में रहने वालों के बीच स्वामीजी के साथ उनका सम्बन्ध, आम चर्चा का विषय बन गया था। हर एक का यही विचार था कि यह सम्बन्ध गम्भीर था। वे जानते थे कि स्वामीजी गुरु थे। और जब उन्होंने सुना कि वे अपने ऊपर के प्रकोष्ठ में प्रतिदिन सवेरे ६ बजे कक्षाएं होंगे तो उनके मन में वहाँ जाने की उत्कंठा हुई।

कीथ : *मैं बोवरी होकर घूमने जाया करता था और उनके लिए फूलों की टोह में रहता था। जब फूल न मिलते, तो मैं कुछ घास या फूस ले जाता। मुझे सवेरे वहाँ जाना बड़ा अच्छा लगता।*

होवर्ड : हरे कृष्ण कीर्तन करता हुआ और पहले से बहुत अच्छा अनुभव करता हुआ मैं द्रुत गति से स्वामीजी के यहाँ जाता था। आश्चर्य है कि लोअर ईस्ट साइड अब मनहूस नहीं लगता था। फुटपाथ और इमारतें चमचमाती मालूम होती थीं और प्रातः की बेला में धुआँ और कुहरा छाने के पहले आकाश लाल हो जाता था।

चक : मैंने कुछ अंगूर लिए और मैं स्वामीजी के द्वार पर गया। सब कुछ नया था। पहले मैं मैकडूगल स्ट्रीट की ओर जाता था, बोहेमिया की ओर अर्थात् कलापूर्ण न्यूयार्क की ओर—और अब मैं लोअर ईस्ट साइड की ओर जाने लगा, जो व्यावसायिक क्षेत्र थी जहाँ न कोई मौजी था, न कलाकार, न संगीतज्ञ, वरन् केवल सपाट इमारतें थीं। और जिस कारण भी हो, रंग-रलियों से भरे वातावरण के बाहर, वहाँ इन्द्रियों और हृदय के लिए सर्वाधिक आकर्षण था।

होवर्ड : मैं पूरे रास्ते गाता हुआ प्रवेशद्वार तक जाता था और तब "ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी" के नाम पर लगी घंटी बजा देता। दरवाजा मरमराता और खुल जाता। मैं गैलरी में से होता हुआ छोटे-से आंगन में पहुँचता और वहाँ से अंगुलियों के बल, इस तरह कि पड़ोसी जाग न जायें, मैं ऊपर दो-मंजिले पर उनके छोटे-से प्रकोष्ठ तक चढ़ जाता।

चक : मैं उनकी इमारत के हाल में गया और वहाँ पत्रपेटियों के ऊपर बहुत-सारे नाम अंकित मिले। मैंने तुरन्त "ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी" नाम एक फटे हुए कागज के टुकड़े पर हाथ से लिखा पाया जो एक खाँचे में धंसा हुआ था। घंटी बजाकर मैं प्रतीक्षा करने लगा। कुछ क्षण बाद जोर से मरमराता हुआ दरवाजा खुला और मैं सुरक्षा-ताले वाले द्वार से अन्दर घुसा। मैं छोटे-से बगीचे को पार करके पीछे की इमारत में पहुँचा और ऊपर चढ़ गया।

प्रभुपाद ने लगभग दो महीने अपने उस एकान्त कमरे में कक्षाएँ ली; यह वही कमरा था, जहाँ वे टाइप करते थे और अतिथियों से मिलते थे। कीथ के लिए यह न केवल दर्शन की कक्षा थी, वरन् मधुरता का रहस्यमय अनुभव भी था।

कीथ : उनकी वाणी की ध्वनि, सूर्योदय की बेला... हम कुछ मिनटों के लिए कीर्तन करते, धीरे-धीरे तालियाँ बजाते हुए और तब स्वामीजी प्रवचन देते। जिस चीज ने मुझे सबसे अधिक वशीभूत किया, वह उनकी वाणी की ध्वनि थी, विशेषकर जब वे संस्कृत में कीर्तन करते होते। उनकी अपरिष्कृत वाणी सुनना मेरे कानों के लिए मधुर संगीत के समान था।

पड़ोसियों की शान्ति भंग न हो, इसलिए प्रभुपाद कहते कि "कीर्तन मंद स्वर में करो" और वे लड़कों से तालियाँ धीरे बजाने को कहते, इतना धीरे कि हाथों का केवल स्पर्श-भर हो। तब वे अपने आध्यात्मिक गुरु की वंदना करते : *"संसार-दावानल-लीढ़-*

लोक।" गुरु महाराज कृपा के सागर से आशीर्वाद प्राप्त कर रहे हैं। जैसे एक बादल वन की अग्नि के ऊपर अग्नि-शमन के लिए जल बरसाता है, उसी तरह गुरु महाराज संसार की प्रज्वलित अग्नि को बुझा देते हैं।" नेत्र बन्द किये वे सवेरे के मंद प्रकाश में बैठे गा रहे थे। कीथ, होवर्ड, चुक, स्टीव, वैली जो थोड़े से लोग वहाँ उपस्थित थे, भावविभोर थे। इसके पहले स्वामीजी की सराहना इतनी अधिक कभी नहीं हुई थी।

चक : *स्वामीजी वहाँ बैठे थे और सेवेरे की बेला में वे उतने प्रभावान और तेजस्वी नहीं प्रतीत होते थे, प्रत्युत वे बहुत आत्मस्थ लगते थे। वे ऐसे दिखाई देते थे, मानों एक पाषाणी-खंड की तरह सदा उसी तरह बैठे रह सकते थे। उनके नेत्र प्रकाश विकीर्ण करते हुए दो छोटे छिद्र लगते थे। उन्होंने अपने मंजीरे उठाए और बहुत हल्के ढंग से उनके किनारों पर ताल दी—एक, दो, तीन। फिर वे गम्भीर स्वर में गाने लगे, ऐसे स्वर में जो विराम-कालों में बेसुरा-सा हो जाता था। यह एक सुर का ऐसा संगीत था, जिससे न आनन्द की अभिव्यक्ति हो रही थी, न विषाद की—यह एक चिर-संगीत था, जो कोई कथा नहीं कह रहा था। हम उनके साथ, जितनी अच्छी तरह हो सका, कीर्तन करते रहे, किन्तु स्वामीजी कई बार रुके और बोले, "मंद स्वर में।" करीब तीस मिनट कीर्तन करने के बाद हम रुक गये। तब नेत्र पूरे खोलते हुए उन्होंने कहा "हमें मंद स्वर में कीर्तन करना चाहिए, क्योंकि कभी कभी पड़ोसी शिकायत करते हैं।"*

गायन के बाद स्वामीजी एक लड़के को डॉ. राधाकृष्णन के संस्करण की *भगवद्गीता* की एक प्रति देते और उससे उच्च स्वर में पढ़ने को कहते। वे उसके अशुद्ध उच्चारणों को ठीक करते और हर श्लोक की व्याख्या करते। चूँकि वहाँ बहुत थोड़े लोग उपस्थित होते थे, इसलिए हर एक को दर्शन पर चर्चा करने के लिए हमेशा पर्याप्त समय मिल जाता था। कक्षा कभी-कभी डेढ़ घंटे तक चलती रहती थी और उसमें तीन से चार श्लोक तक हो जाते थे।

• • •

स्टीव : *स्वामीजी ने बताया कि आम फलों का राजा है और उन्होंने यह भी कहा कि इस देश में आम आसानी से नहीं मिलते। मेरे मन में विचार आया कि मैं उनके लिए आम लाऊं। फर्स्ट एवन्यू में एक स्टोर था, जो कूलर में बहुत ताजे आम हमेशा रखता था। तो, मैंने अपनी आदत बना ली। प्रतिदिन कार्य से अवकाश पाने पर मैं एक बढ़िया आम खरीदता और उसे स्वामीजी के पास ले जाता।*

वैली : *कुछ लड़के कहते, "मैं यह स्वामीजी के लिए कर रहा हूँ," इसलिए मैं स्वामीजी के पास गया और बोला, "क्या मैं आप की कोई सेवा कर सकता हूँ?" उन्होंने*

कहा कि उनकी कक्षा में मैं नोट लिखा करूँ।

लड़कों को विश्वास था कि स्वामीजी के प्रति उनकी सेवा आध्यात्मिक सेवा या भक्ति थी। गुरु महाराज की सेवा करना, जो कृष्ण के प्रतिनिधि थे, सीधे कृष्ण की सेवा करना था।

एक दिन सवेरे प्रभुपाद ने होवर्ड से कहा कि कृष्णभावनामृत के दर्शन का प्रसार करने के लिए उन्हें उसकी सहायता चाहिए थी। होवर्ड उनकी सहायता करना चाहता था, इसलिए वह स्वामी के *श्रीमद्भागवत* की पाण्डुलिपियाँ टाइप करने को तैयार हो गया।

होवर्ड : *पहले श्लोक के प्रथम शब्द थे, "ओ दी किंग" और स्वभावतः मैं सोचने लगा कि क्या 'ओ' किंग का नाम हैं और 'दि किंग' उसका समानाधिकरण। कुछ समय बाद मेरी समझ में आया कि 'ओ दी किंग' की जगह उनका आशय 'ओ किंग' से था। मैंने उनकी अनुमति के बिना गलती ठीक नहीं की। "हाँ" उन्होंने कहा, "इसे ठीक कर दो।" फिर मैं उन्हें कुछ परिवर्तन सुझाने लगा और कहा कि यदि वे चाहें तो मैं संशोधन कर सकता था, मैंने यह भी बताया कि मैं अंग्रेजी में एम.ए. था और पिछले वर्ष ओहायो स्टेट में पढ़ा चुका था। "ओह, हाँ," स्वामीजी ने कहा, "संशोधन कर दो। इसे बढ़िया बना दो।"*

वे उन्हें भक्तियोग की धारणा समझा रहे थे। "हो सकता है कि कोई भक्त आरम्भ में पूर्ण न हो," उन्होंने कहा, "किन्तु यदि वह सेवा में लग गया है और ज्योंही उसकी सेवा का आरम्भ हो जाए, त्योंही वह शुद्ध बन सकता है। सेवा का स्थान सर्वत्र है, भौतिक संसार में भी और आध्यात्मिक जगत में भी।" भौतिक संसार की सेवा से आत्म-तुष्टि नहीं होती—केवल भक्ति से, जो शुद्ध सेवा है, कृष्ण की सेवा है, आत्म-तुष्टि मिल सकती है। और कृष्ण की सेवा का सर्वोत्तम ढंग कृष्ण के प्रतिनिधि की सेवा करना है।

लड़कों की समझ में बात बहुत जल्दी आ गई। यह ऐसा काम था, जो सरलता से किया जा सकता था; यह ध्यान करने जैसा कठिन नहीं था—यह क्रिया-प्रधान था। कुछ कार्य करना था और वह कार्य कृष्ण के लिए था। उन्होंने देखा था कि स्वामीजी ने बोवरी के उस आवारे के साथ कैसा व्यवहार किया था, जो उनके पास शौचालय में प्रयोग होने वाले कागज का उपहार लेकर आया था। "जरा देखो," स्वामीजी ने कहा था, "उसका चित्त ठिकाने नहीं है, लेकिन उसने सोचा, "मुझे कुछ सेवा करनी चाहिए।" किन्तु सेवा ऐच्छिक होनी चाहिए, प्रेम से प्रेरित होनी चाहिए, बल से नहीं।"

वैली : *एक बार स्वामीजी ने मुझसे पूछा, "क्या तुम सड़क में चलते समय वैष्णव तिलक लगाए रख सकते हो?" मैंने उत्तर दिया, "ऐसा करना मुझे बड़ा हास्यास्पद लगेगा, किन्तु यदि आप चाहते हैं, तो मैं करूँगा।" स्वामीजी बोले, "नहीं, मैं तुमसे कोई ऐसा*

काम करने को नहीं कहता, जिसे तुम करना नहीं चाहते।"

स्टीव : *एक दिन जब नित्य की भाँति मैं स्वामीजी के लिए आम लाया, तो उस समय वे अपने कमरे में भक्तों से घिरे थे। मैंने उन्हें अपना आम दिया और बैठ गया और वे बोले, "बहुत अच्छा लड़का है।" जिस ढंग से उन्होंने वह कहा, उससे लगता था कि मानो मैं एक छोटा बच्चा होऊँ। उससे कमरे में हर आदमी हँसने लगा और मैं अपने आपको बेवकूफ-सा अनुभव करने लगा। किन्तु स्वामीजी ने यह कहकर सब का मनोभाव बदल दिया, "नहीं, यह वास्तव में प्रेम है, यह कृष्णभावनामृत है" और तब कोई नहीं हँसा।*

जब होवर्ड सम्पादन में पहले-पहल तत्पर हुआ, तो उसने सवेरे का सारा समय स्वामीजी के कमरे में काम करने में बिताया। उसने कहा, "यदि टाइप का और कुछ काम हो तो मुझे बताएँ। मैं उसे माट स्ट्रीट में ले जा सकता हूँ और वहाँ से टाइप कर लाऊँगा।"

"और अधिक? अभी तो बहुत सारा है।" स्वामीजी ने कहा। उन्होंने आलमारी खोली और उससे केसरिया कपड़े में बँधी पाण्डुलिपियों के दो बड़े बण्डल निकाले। उनमें प्रभुपाद द्वारा अनूदित *श्रीमद्भागवत* की पास-पास पंक्तियों में लिखी पाण्डुलिपियों के हजारों पृष्ठ थे। होवर्ड आश्चर्यचकित होकर उनके सामने खड़ा हो गया। "यह तो जीवन-भर का टाइप का काम है," उसने कहा। और प्रभुपाद मुस्कराने लगे और बोले, "ओह, हाँ, अनेक जीवनों का।"

• • •

प्रभुपाद की उपस्थिति, उनके अभिभाषणों और कीर्तनों के कारण अब हर एक स्टोरफ्रंट को "मन्दिर" कहकर पुकारने लगा था। किन्तु फिर भी वह अभी तक एक खाली, कुत्सित स्टोरफ्रंट था। उसको सजाने की प्रेरणा माट स्ट्रीट के लड़कों से मिली।

होवर्ड, कीथ और वैली ने एक योजना बनाई कि जब स्वामीजी संध्याकालीन कीर्तन में आयें, तो उन्हें आश्चर्य में डाला जाये। वैली ने सबके कमरों से पर्दे हटा लिए, उन्हें धुलाई की मशीन में डाला (जिसका पानी गंदगी से गहरा भूरा हो गया था) और फिर बैंगनी रंग में रंग दिया। माट स्ट्रीट का प्रकोष्ठ पोस्टरों, चित्रों और होवर्ड तथा कीथ द्वारा भारत से लाए गये सजावटी रेशम की बड़ी-बड़ी लटकनों से अलंकृत का दिया था। लड़कों ने उन सभी चित्रों, दीवाल-दरियों, धूपदानों और अन्य वस्तुओं को इकट्ठा किया और बैंगनी पर्दों के साथ वे उन्हें स्टोरफ्रंट ले गये और अपना सजावट का काम शुरू कर दिया।

स्टोरफ्रंट में लड़कों ने प्रभुपाद के बैठने के लिए लकड़ी का एक मंच बनाया और उसे एक पुराने मखमली कपड़े से ढक दिया। मंच के पीछे की दीवाल के उस भाग पर जो

आंगन की ओर खुलने वाली दो खिड़कियों के बीच में था, उन्होंने बैंगनी पर्दे टाँग दिये। इनकी दोनों ओर दो नारंगी रंग के पर्दे टाँग दिए गये। स्वामीजी के आसन के ठीक ऊपर नारंगी रंग के एक पर्दे से लगाकर उन्होंने वृत्ताकार कैनवेस पर चित्रित राधा-कृष्ण का एक विशाल मौलिक चित्र, जिसे जेम्स ग्रीन ने बनाया था, लटका दिया। प्रभुपाद ने जेम्स को चित्र बनाने का यह काम सौंपा था और नमूने के रूप में *श्रीमद्भागवत* का आवरण-पृष्ठ उसे दिया था, जिस पर राधा-कृष्ण का भारत में बना अनगढ़ चित्र था। राधा और कृष्ण की आकृतियाँ कुछ-कुछ अस्पष्ट थीं, किन्तु लोअर ईस्ट साइड के आलोचकों ने, जो स्टोरफ्रंट में प्रायः आया करते थे, इस चित्र को एक आश्चर्यजनक उपलब्धि बताया।

कीथ और होवर्ड को कम विश्वास था कि उनके द्वारा भारत से लाए गये चित्रों और अनुकृतियों को प्रभुपाद पसन्द करेंगे, इसलिए उन्होंने उन्हें प्रभुपाद के आसन से दूर, मन्दिर से जाने वाली सड़क के निकट लटकाया। इनमें से एक चित्रानुकृति मैं, जो भारत में विख्यात थी, हनुमान आकाश-मार्ग से एक पर्वत भगवान् रामचन्द्रजी के पास ले जाते हुए दिखाए गये थे। लड़कों को इसकी कोई धारणा नहीं थी कि हनुमान किस तरह के प्राणी थे। उनके ऊपर के होंठ की शकल के कारण वे सोचते थे कि शायद वे एक बिल्ली थे। फिर, छह बांहों वाले एक पुरुष का भी चित्र था, जिसके हरे रंग की दो बाहों में धनुष और बाण थे, नीले रंग की दो बाहों में बाँसुरी थी और सुनहरे रंग की शेष दो बाहों में एक दंड और पात्र थे।

तीसरे पहर तक वे बैठने के आसन को सजा चुके थे, पर्दे लटका चुके थे, सजावटी रेशमी लटकनों, चित्रों और अनुकृतियों को लगा चुके थे और अब मंच को फूलों और मोमबत्तियों से सजाने में लगे थे। उनमें से कोई स्वामीजी के बैठने के लिए एक गद्दी और उनकी पीठ के सहारे के लिए एक भारी-भरकम कुर्सी से एक पुराना कूशन निकाल लाया।

माट स्ट्रीट से आये सामान के अतिरिक्त राबर्ट नेल्सन ने अपने दादा के गराज से बेल्जियम शैली का एक पूर्वी कालीन निकाला और भूगर्भ-मार्ग से उसे वह २६ सेकंड एवन्यू ले आया। रैफेल और डान भी सजावट में शामिल हुए।

इस रहस्य को रहस्य ही बनाए रखा गया और लड़के स्वामीजी की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करते रहे। उस रात, जब वे कीर्तन के लिए अन्दर आये तब उन्होंने नव-सज्जित मन्दिर को देखा (वहाँ अगरबत्ती भी जल रही थी) और उन्होंने संतोष से पलकें ऊपर उठाईं। "तुम लोग आगे बढ़ रहे हो," कमरे में चारों ओर देखते हुए और खुलकर मुस्कराते हुए उन्होंने कहा, "हाँ," उन्होंने आगे कहा, "यही कृष्णभावनामृत है।" स्वामीजी की सहज प्रसन्न मुद्रा लड़कों को अपने सच्चे श्रम का पुरस्कार जैसी लगी। तब वे मंच पर आये—लड़के साँस रोककर आशा कर रहे थे कि वह मजबूत साबित होगा।

स्वामीजी भक्तों और सजावटों को देखते हुए बैठ गये।

लड़कों ने स्वामीजी को प्रसन्न कर लिया था। किन्तु अब उन्होंने अत्यन्त गम्भीर मुद्रा धारणा कर ली और यद्यपि लड़के जानते थे कि वे वही स्वामीजी थे, किन्तु उनकी ठी-ठी हँसी उनके गले में अवरुद्ध हो गई और जो एक-दूसरे की ओर वे प्रसन्नतापूर्वक दृष्टि-निक्षेप कर रहे थे, वह अनिश्चय और घबड़ाहट के कारण अचानक बन्द हो गई। स्वामीजी की गम्भीरता को देखकर कुछ क्षण पहले की उनकी प्रसन्नता अचानक बचकानी लगने लगी। जैसे बादल सूर्य को काली छाया की तरह जल्दी से ढक लेता है, उसी तरह स्वामीजी ने अपनी प्रसन्नता को गम्भीरता में परिवर्तित कर दिया और लड़कों ने भी उन्हीं की तरह तुरन्त गम्भीर और सौम्य बनने का निश्चय किया। स्वामीजी ने अपने मंजीरे उठाए और सराहना सूचक मुस्कान की किरण विकीर्ण की। लड़कों के हृदय भी फिर से उल्लसित हो उठे।

मन्दिर अब भी एक छोटा-सा स्टोरफ्रंट था, जिसमें बहुत-से प्रकट और अप्रकट तिलचट्टे रहते थे, जिसका फर्श टेढ़ा था और जिसमें प्रकाश बहुत मंद था। किन्तु चूँकि उसकी सजावट के बहुत सारे सामान भारत के थे, इसलिए उसका वातावरण यथार्थ था, विशेषकर मंच पर स्वामीजी के उपस्थित होने से। अब जो अतिथि वहाँ प्रवेश करते, वे अपने आपको एकाएक एक छोटे-से भारतीय मन्दिर में पाते।

माइक ग्रांट : *मैं एक दिन सायंकाल वहाँ गया, तो देखा कि अचानक वहाँ फर्श पर कालीन बिछे हैं और दीवारों पर चित्र और तस्वीरें लटकी हैं। अचानक ही, वह इतना खिल उठा था और लोगों से भरा था। मुझे आश्चर्य हुआ कि किस तरह कुछ दिनों के अन्दर ही लोगों ने उतनी विस्मयकारी चीजें वहाँ इकट्ठी कर दी थीं। जब मैं उस संध्या को वहाँ गया और देखा कि उसे किस तरह अलंकृत किया गया था, तो मुझे इस बात की बहुत चिन्ता नहीं रही कि प्रभुपाद अपने उद्देश्य में सफल होंगे। मैंने सोचा कि अब तो सचमुच इसका प्रभाव होने लगा है।*

प्रभुपाद ने अपने अनुयायियों के समूह को देखा। वे इस बात से द्रवित थे कि उनके अनुयायी किस तरह उनको इतना सम्मान दे रहे थे और कृष्ण के स्टोरफ्रंट को सजाने का प्रयत्न कर रहे थे। किसी भक्त का कृष्ण को भेंट अर्पण करना उनके लिए कोई नई चीज नहीं थी। किन्तु यह नया था। न्यूयार्क में, "इस भयानक स्थान" में, भक्ति का बीज अंकुरित हो रहा था और उस कोमल अंकुर के माली के रूप में स्वाभाविक था कि वे कृष्ण की कृपा पर द्रवित हो जाते। दीवाल पर लगे चित्रों को देखते हुए उन्होंने कहा, "मैं कल आऊँगा, चित्रों को देखूँगा और तुम्हें बताऊँगा कि उनमें कौन-से अच्छे हैं।"

अगले दिन, प्रभुपाद प्रदर्शित कला का मूल्यांकन करने के लिए नीचे आये। एक फ्रेम

किये हुए वाटरकलर के चित्र में एक व्यक्ति ढोल बजा रहा था और एक बालिका नृत्य कर रही थी। "यह बिल्कुल ठीक है," उन्होंने कहा। किन्तु एक स्त्री का दूसरा चित्र अधिक सांसारिक था और उन्होंने, "नहीं, यह चित्र उतना अच्छा नहीं है।" वे मन्दिर के पीछे की ओर गये। होवर्ड, कीथ और वैली उत्सुकतापूर्वक उनका अनुगमन कर रहे थे। जब उन्होंने छह भुजाओं वाले पुरुष का चित्र देखा, तो कहा, "ओह! यह तो बहुत अच्छा है।"

"यह कौन है ?" वैली ने पूछा।

"ये भगवान् चैतन्य हैं।" प्रभुपाद ने उत्तर दिया।

"उनकी छह भुजाएँ क्यों हैं ?"

"क्योंकि वे राम और कृष्ण दोनों के रूप थे। ये भुजाएँ राम की हैं और ये भुजाएँ कृष्ण की हैं।"

"अन्य दो भुजाएँ किनकी हैं ?" कीथ ने पूछा।

"वे एक संन्यासी की भुजाएँ हैं।"

वे दूसरे चित्र के पास गये। "यह भी बहुत अच्छा है।"

"यह कौन है ?" होवर्ड ने पूछा।

"ये हनुमान हैं।"

"क्या वे बिल्ली हैं ?"

"नहीं," प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "वे वानर हैं।"

हनुमान को *रामायण* ग्रंथ में भगवान् रामचन्द्र के वीर, स्वामिभक्त सेवक के रूप में महिमा-मंडित किये गये हैं। करोड़ों भारतीय भगवान् राम के अवतार और उनके सेवक हनुमान की पूजा करते हैं, जिनके कार्यकलापों को रंगमंच, चित्रपट, कला और मन्दिर-आराधना में निरन्तर प्रदर्शित किया जाता है। हनुमान कौन थे, इस विषय में माट स्ट्रीट के लड़कों का अज्ञान नगर के अभिजात वर्ग की उन वृद्ध महिलाओं से कम नहीं था, जो प्रभुपाद के यह पूछने पर कि क्या उनमें से किसी ने कृष्ण का चित्र देखा है, शून्य दृष्टि से ताकती रह गईं थीं। लोअर ईस्ट साइड के रहस्यवादी एक बिल्ली और हनुमान में अन्तर नहीं कर सकते थे और वे भारत से, जो उनकी निगाह में केवल नशाबाजों का भारत था, भगवान् चैतन्य महाप्रभु का एक चित्र यह जाने बिना ही लाए थे कि वे कौन थे। तो भी इन लड़कों और उन भद्र महिलाओं में एक महत्त्वपूर्ण अन्तर था : ये लड़के स्वामीजी की सेवा कर रहे थे और हरे कृष्ण कीर्तन कर रहे थे। वे भौतिकतावादी जीवन और मध्यवर्ग के परिश्रम-पारिश्रमिक समष्टि को समझ चुके थे। स्वामीजी द्वारा प्रतिश्रुत विस्तृत कृष्णभावनामृत के प्रति उनके हृदय जाग उठे थे और उनकी व्यक्तिगत संगति में उन्हें उत्कर्ष जैसी किसी वस्तु की अनुभूति होने लगी थी। बोवरी के उस आवारा लड़के की

तरह, जिसने प्रभुपाद के प्रवचन के बीच, उन्हें शौचालय में प्रयोग होने वाले कागज का उपहार दिया था, लोअर ईस्ट साइड के लड़कों के मन भी बिल्कुल दुरुस्त नहीं थे, फिर भी जैसाकि प्रभुपाद समझ रहे थे, उनके हृदयों के भीतर से कृष्ण उनका मार्गदर्शन कर रहे थे। प्रभुपाद जानते थे कि कृष्ण का कीर्तन करने और उनके बारे में सुनने से उनमें शुभ परिवर्तन होगा।

• • •

१९६६ ई. की ग्रीष्मऋतु का अगस्त आ गया और प्रभुपाद का स्वास्थ्य ठीक रहा। उनके लिए ये दिन बड़े अच्छे थे। न्यूयार्कवासियों को ग्रीष्म ऋतु की गर्म हवाओं से शिकायत थी, किन्तु उससे उस एक व्यक्ति को कोई असुविधा नहीं हुई, जो वृन्दावन की प्रचण्ड ग्रीष्म ऋतु के १०० डिग्री से ऊपर के तापमान का अभ्यस्त था। "यह भारत जैसा ही है," वे कहते, जब वे बिना कमीज पहने ही बाहर निकलते, उन्हें लगता कि उन्हें पूरा आराम और चैन है। उन्होंने सोचा था कि अमेरिका में उन्हें उबले हुए आलू खाकर जीवन बिताना होगा (अन्यथा मांस के अतिरिक्त वहाँ कुछ नहीं मिलेगा), किन्तु यहाँ वे भारत की तरह ही प्रसन्नतापूर्वक वही भात, दाल और चपातियाँ खा रहे थे और उन्हें तीन खानों के कुकर में पका रहे थे। जब से वे सेकंड एवन्यू में आ गये थे, तब से *श्रीमद्भागवतम्* पर भी उनका काम नियमित रूप से चल रहा था। और अब कृष्ण उनके पास इन कार्यनिष्ठ नवयुवकों को भेज रहे थे, जो उनके लिए खाना पका रहे थे, टाइप कर रहे थे, नियमित रूप से उनका प्रवचन सुन रहे थे, हरे कृष्ण कीर्तन कर रहे थे तथा इससे और अधिक की जिज्ञासा कर रहे थे।

प्रभुपाद अब भी एकाकी प्रचारक थे। वे स्वतंत्र थे कि रहें या जायें—स्टोरफ्रंट में रहने वाले लड़कों से नितान्त स्वतंत्र—वे कृष्ण के गहरे सान्निध्य में अपनी पुस्तकें लिख रहे थे। किन्तु अब उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ को अपने आध्यात्मिक बच्चे की तरह अपना लिया था। जिज्ञासु युवक, जिनमें से कुछ एक महीने से अधिक समय से नियमित रूप से कीर्तन करते आ रहे थे, लड़खड़ाते हुए आध्यात्मिक शिशुओं की तरह थे और प्रभुपाद अनुभव करते थे कि उनके मार्गदर्शन का दायित्व उन पर है। वे प्रभुपाद को अपना आध्यात्मिक गुरु समझने लगे थे और आध्यात्मिक जीवन में प्रवेश कराने के लिए उन पर विश्वास करने लगे थे। यद्यपि वे उन बहुत-सारे नियमों का तात्कालिक पालन करने में असमर्थ थे, जिनका अनुसरण भारत में ब्राह्मणों और वैष्णवों द्वारा किया जाता था, पर प्रभुपाद इस विषय में आशावान् थे। रूप गोस्वामी के अनुसार सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त यह था कि मनुष्य "येन केन प्रकारेण" कृष्णभावनामय हो जायें। लोगों को हरे

कृष्ण का कीर्तन करना चाहिए और भक्तियोग का अभ्यास करना चाहिए। जो कुछ उनके पास है, उसे कृष्ण की सेवा में अर्पित कर देना चाहिए। और प्रभुपाद कृष्णभावनामृत के इस मूल सिद्धान्त का अभ्यास उस परम सीमा तक कर रहे थे, जिसके आगे पहुँचा, वैष्णव-मत के इतिहास में, कोई नहीं मिलता था।

यद्यपि वे लड़कों को खाना बनाने और टाइप करने में लगा रहे थे, किन्तु प्रभुपाद स्वयं उनसे कुछ कम नहीं कर रहे थे। स्थिति यह थी कि यदि एक कार्यनिष्ठ व्यक्ति सेवा का अवसर माँगने के लिए आगे आता, तो सौ व्यक्ति ऐसे थे, जो सेवा के लिए नहीं, वरन् चुनौती देने आते थे। उनसे बात करते समय, कभी कभी चिल्लाकर और मुक्का तानकर, प्रभुपाद को मायावादी दर्शन के विरुद्ध कृष्ण का समर्थन करना पड़ता था। यह भी श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर के प्रति उनकी सेवा थी। वे अमेरिका अवकाशग्रहण करने नहीं आये थे। इसलिए दिन-प्रतिदिन इस बात की पुष्टि होती जा रही थी कि उनके कामों, उनके अनुयायियों और उन्हें मिलने वाली चुनौतियों में वृद्धि ही होगी।

वे कितना कर सकेंगे, यह कृष्ण पर निर्भर था। "मैं एक वृद्ध पुरुष हूँ," उन्होंने कहा, "मैं किसी भी क्षण जा सकता हूँ," किन्तु यदि उनका जाना इस समय हुआ, तो निश्चय ही कृष्णभावनामृत का भी अन्त हो जायेगा, क्योंकि कृष्णभावनामृत संघ उनके अतिरिक्त कुछ नहीं था : भावविभोरता की अवस्था में सिर को आगे-पीछे करते हुए कीर्तन का नेतृत्व करना, आँगन के आर-पार होकर, मन्दिर या प्रकोष्ठ के बाहर आना-जाना, घंटों बैठकर मुस्कराते हुए दार्शनिक विचार-विमर्श करना—इस तरह प्रभुपाद न्यूयार्क के लोअर ईस्ट साइड में कृष्णभावनामृत के सीमित, सुकुमार और नियंत्रित वातावरण के एकमात्र धारक और पोषक थे। ●